कमला नेहरू महिला महाविद्यालय ; भुबनेश्वर

हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

हिंदी भारती

दीपावली की हार्दिक शुभकामनायें

अक्तूबर - 2018

संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

उप – संपादक : कु. सोनाली राउत

कु. सस्मिता महंती

कु. श्राबणी महंती

संपादकीय

"हिंदी भारती" का अक्तूबर अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। "हिंदी भारती" के सभी पाठकों को -

"दीपावली की हार्दिक शुभकामनायें"

"हिंदी भारती" का यह अंक दीपमालाओं के पर्व दीपावली को समर्पित है। छात्राओं की परीक्षा को दृष्टि में रखते हुए इस अंक में लेखों की संख्या कम कर दी गई है, अगले अंक से पत्रिका अपने संपूर्ण वैभव के साथ प्रस्तुत होगी। हमारी ई - पत्रिका ने हमेशा प्रयास किया है कि छात्राओं को प्रोत्साहित करती रहे और उनमें छुपी सृजनात्मकता को तथा नेतृत्व तथा प्रबंधन को अवसर प्रधान करती रहे। अतः इस अंक में इस ओर ध्यान देते हुए संपादक मंडल में विभाग की +3 प्रथम वर्ष की छात्रा श्राबणी महंती को स्थान दिया गया है। पत्रिका के इस अंक में नवागत छात्राओं के संदेशों और सुझावों को "आपकी बात" शीर्षक के अंतर्गत शामिल किया है। "आपकी बात" हमारे लिये अखण्ड प्रेरणा का स्रोत है।

हम आशा करते हैं कि हर अंक की तरह आप इस अंक को भी स्वीकार करते हुए भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे और आपका आदर और स्नेह हमें इसी तरह मिलता रहेगा। अब हमारी पत्रिका को आप हमारे महाविद्यालय के वेब साइट www.knwcbbsr.com पर भी पढ़ सकते हैं।

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

अनुक्रमणिका

क्र सं.	शीर्षक	विधा	नाम	पृ. सं.
1.	आलोक पर्व की ज्योतिर्मयी देवी लक्ष्मी	लेख	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी	5
2.	सम्मान	कहानी	पिंकी सिंह	8
3.	दीपावली	लेख	मोनालिसा महंती	10
4.	मदारीपुर जंक्शन के उपन्यासकार बालेंदु द्विवेदी से बातचीत	भेंटवार्ता	संकलित	11
5.	दिवाली	लेख	मोनालिसा साहू	14
6.	अनाहार कमिश्नर की एक रिपोर्ट	कहानी	लेखक - डॉ हृषिकेश पंडा हिंदी रुपांतर : डॉ वेदुला रामा लक्ष्मी	15
7.	कोशिश	लेख	शरीफा शरवारी	35
8.	मज़हब	लेख	शरीफा शरवारी	35
9.	दीपक न्यारे	लेख	शाकंबरी	36
10.	आपकी बात	आपके विचार		39
11.	कजाकी	यू ट्यूब लिंक	प्रेमचंद	40
12.	यादों के गलियारों से	चित्र स्मृतियाँ	यादों के गलियारों से	41

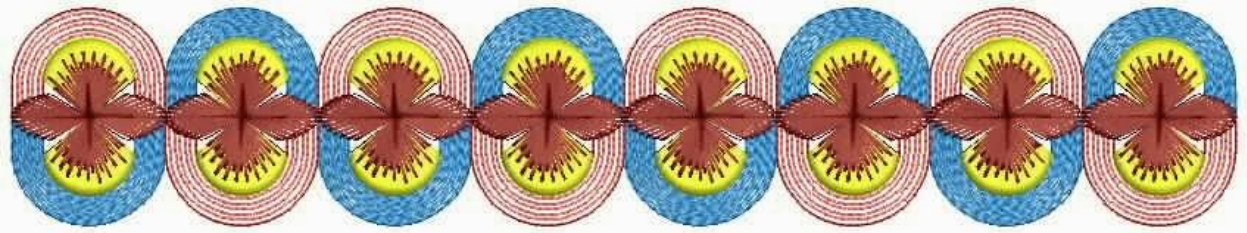

आलोक पर्व की ज्योतिर्मयी देवी लक्ष्मी

- हजारी प्रसाद द्विवेदी

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार समस्त सृष्टि की मूलभूत आद्याशक्ति महालक्ष्मी है। वह सत्व, सज और तम तीनों गुणों का मूल समवाय है। वही आद्याशक्ति है। वह समस्त विश्व में व्याप्त होकर विराजमान है। वह लक्ष्य और अलक्ष्य, इन दो रूपों में रहती है। लक्ष्य रूप में यह चराचर जगत ही उसका स्वरूप है और-अलक्ष्य रूप में यह समस्त जगत् की सृष्टि का मूल कारण है। उसी से विभिन्न शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है। दीपावली को इसी महालक्ष्मी का पूजन होता है। तामसिक रूप में वह क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, कालरात्रि, महामारी के रूप में अभिव्यक्ति होती है, राजसिक रूप में वह जगत् का भरण-पोषण करने वाली 'श्री' के रूप में उन लोगों के घर में आती है, जिन्होंने पूर्व-जन्म में शुभ कर्म किए होते हैं, परन्तु यदि इस जन्म में उनकी वृत्ति पाप की ओर जाती है, तो वह भयंकर अलक्ष्मी बन जाती है। सात्विक रूप में वह महाविद्या, महावाणी भारती वाक् सरस्वती के रूप में अभिव्यक्त होती है। मूल आद्याशक्ति ही महालक्ष्मी है।

शास्त्रों में भी ऐसे वचन मिल जाते हैं, जिनमें महाकाली या महासरस्वती को ही आद्याशक्ति कहा गया है। जो लोग हिन्दू शास्त्रों की पद्धति से परिचित नहीं होते, वे साधारणतः इस प्रकार की बातों को देखकर कह उठते हैं कि यह 'बहुदेववाद' है। यूरोपियन पंडितों ने इसके लिए 'पालिथीज़्म' शब्द का प्रयोग किया है। पालिथीज़्म या बहुदेववाद से एक ऐसे धर्म का बोध होता है, जिसमें अनेक छोटे-देवताओं की मण्डली में विश्वास किया जाता है। इन देवताओं की मर्यादा और अधिकार निश्चित होते हैं। जो लोग हिन्दू शास्त्रों की थोड़ी भी गहराई में जाना आवश्यक समझते हैं, वे इस बात को कभी नहीं स्वीकार कर सकते। मैक्समूलर ने बहुत पहले बताया था कि वेदों में पाया जानेवाला 'बहुदेववाद' वस्तुतः बहुदेववाद है ही नहीं, क्योंकि न तो वह ग्रीक-रोमन बहुदेववाद के समान है, जिसमें बहुत-से देव-देवी एक महादेवता के अधीन होते हैं और न अफ्रीका आदि देशों की आदिम जातियों में पाए जानेवाले बहुदेववाद के समान है जिसमें छोटे-मोटे अनेक देवता स्वतन्त्र होते हैं। मैक्समूलर ने इस विश्वास के लिए एक शब्द सुझाया था-

हेनोथीज्म, जिसे हिन्दी में 'एकैकदेववाद' शब्द से कुछ-कुछ स्पष्ट किया जा सकता है। इस प्रकार के धार्मिक विश्वास में अनेक देवता की उपासना होती अवश्य है, पर जिस देवता की उपासना चलती रहती है, उसे ही सारे देवताओं से श्रेष्ठ और सबका हेतुभूत माना जाता है। जैसे जब इन्द्र की उपासना का प्रसंग होगा, तो कहा जाएगा कि इन्द्र ही आदि देव हैं, वरुण, यम, सूर्य, चन्द्र, अग्नि सबका वह स्वामी है और सबका मूलभूत है। पर जब अग्नि की उपासना का प्रसंग होगा तो कहा जायेगा कि अग्नि ही मुख्य देवता है और इन्द्र, वरुण आदि का स्वामी है और सबका मूलभूत देवता है, इत्यादि।

परन्तु थोड़ी और गहराई में जाकर देखा जाये तो इसका स्पष्ट रूप अद्वैतवाद है। एक ही देवता है, जो विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हो रहा है। उपासना के समय उसके जिस विशिष्ट रूप का ध्यान किया जाता है, वही समस्त अन्य रूपों में मुख्य और आदिभूत माना जाता है। इसका रहस्य यह है कि साधक सदा मूल अद्वैत सत्ता के प्रति सजग रहता है। अपनी रुचि और संस्कारों और कभी-कभी प्रयोजन के अनुसार वह उपास्य के विशिष्ट रूप की उपासना अवश्य करता है, परन्तु शास्त्र उसे कभी भूलने नहीं देना चाहता कि रूप कोई हो, है वह मूल अद्वैत सत्ता की ही अभिव्यक्ति। इस प्रकार हिन्दू शास्त्रों की इस पद्धति का रहस्य यही है कि उपास्य वस्तुतः मूल अद्वैत सत्ता का ही रूप है। इसी बात को और भी स्पष्ट करके वैदिक ऋषि ने कहा था कि जो देवता अग्नि में है, जल में है, वायु में है, औषधियों में है, वनस्पतियों में है, उसी महादेव को मैं प्रणाम करता हूँ!

आज से कोई दो हज़ार वर्ष पहले से इस देश के धार्मिक साहित्य में और शिल्प और कला में यह विश्वास मुखर हो उठा है कि उपास्य वस्तुतः देवता की शक्ति होती है। यह नहीं है कि यह विचार नया है, पहले था ही नहीं, पर उपलब्ध धार्मिक साहित्य और शिल्प और कला-सामग्री में यह बात इस समय से अधिक व्यापक रूप में और अत्यधिक मुखर भाव से प्रकट हुई दिखती है। इस विश्वास का सबसे बड़ा आवश्यक अंग यह है कि शक्ति और शक्तिमान् में कोई तात्विक भेद नहीं है, दोनों एक हैं।

चन्द्रमा और चन्द्रिका की भाँति वे अलग-अलग प्रतीत होकर भी तत्त्वतः एक हैं-

"अन्तर नैव जानी मश्चन्द्र-चन्द्रिकयोरिव।"

परन्तु उपास्य शक्ति ही है। जो लोग इस विश्वास को अपनी तर्कसम्मत सीमा तक खींचकर ले जाते हैं, वे शक्त कहलाते हैं। जो शक्ति और शक्तिमान् के एकत्व पर अधिक ज़ोर देते हैं, वे शाक्त नहीं कहलाते। मगर कहलाते हों या न कहलाते हों, शक्ति की उपास्यता पर विश्वास दोनों का है। जिन लोगों ने संसार की भरण-पोषण करनेवाली वैष्णवी शक्ति को मुख्य रूप से उपास्य माना है, उन्होंने उस आदिभूता शक्ति का नाम 'महालक्ष्मी' स्वीकार किया है। दीपावली के पुण्य-पर्व पर इसी आद्याशक्ति की पूजा होती है। देश के पूर्वी हिस्सों में इस दिन महाकाली की पूजा होती है। दोनों बातों में कोई विरोध नहीं है। केवल रुचि और संस्कार के अनुसार आद्याशक्ति के विशिष्ट रूपों पर बल दिया जाता है। पूजा आद्याशक्ति की ही होती है। मुझे यह ठीक-ठीक नहीं मालूम कि देश के किसी कोने में इस दिन महासरस्वती की पूजा होती है या नहीं। होती हो तो कुछ अचरज की बात नहीं होगी। दीपावली का पर्व आद्याशक्ति के विभिन्न रूपों के स्मरण का दिन है।

यह सारा दृश्यमान जगत् ज्ञान, इच्छा और क्रिया के रूप में त्रिटुपीकृत है। ब्रह्म की मूल शक्ति में इन तीनों का सूक्ष्म रूप में अवस्थान होगा। त्रिपुटीकृत जगत की मूल कारणभूता इस शक्ति को 'त्रिपुरा' भी कहा जाता है। आरम्भ में जिसे महालक्ष्मी कहा गया है उससे यह अभिन्न है। ज्ञान रूप में अभिव्यक्त होने पर सत्त्वगुणप्रधान सरस्वती के रूप में, इच्छा रूप में रजोगुण प्रधान लक्ष्मी के रुप में और क्रिया रुप में तमोगुण-प्रधान काली के रुप में उपास्य होती है। लक्ष्मी इच्छा रूप में अभिव्यक्त होती है। जो साधक लक्ष्मी रूप में आद्याशक्ति की उपासना करते हैं, उनके चित्त में इच्छा तत्त्व की प्रधानता होती है, पर बाकी दो तत्त्व-ज्ञान और क्रिया-भी उसमें सहायक होते हैं। इसीलिए लक्ष्मी की उपासना 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' होती है, अर्थात् वह ज्ञान द्वारा चालित और क्रिया द्वारा अनुगमित इच्छा-शक्ति की उपासना होती है। 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' का मतलब है कि यद्यपि इच्छा-शक्ति ही मुख्यतया उपास्य है, पर पहले ज्ञान की सहायता और बाद में क्रिया का समर्थन इसमें आवश्यक है। यदि उल्टा हो जाये, अर्थात् इच्छा शक्ति की उपासना क्रियापूर्वा और ज्ञानपरा हो जाये, तो उपासना का रूप बदल जाता है। पहली अवस्था में उपास्या लक्ष्मी समस्त जगत् के उपकार के लिए होती है। उस लक्ष्मी का वाहन गरुड़ होता है। गरुड़ शक्ति, वेग और सेवावृत्ति का प्रतीक है। दूसरी अवस्था में उसका वाहन उल्लू होता है। उल्लू स्वार्थ, अन्धकारप्रियता और विच्छिन्नता का प्रतीक है।

लक्ष्मी तभी उपास्य होकर भक्त को ठीक-ठीक कृतकृत्य करती है। तब उसके चित्त में सबके कल्याण की कामना रहती है। यदि केवल अपना स्वार्थ ही साधक के चित्त में प्रधान हो, तो वह उलूकवाहिनी शक्ति की ही कृपा पा सकता है। फिर तो वह तमोगुण का शिकार हो जाता है। उसकी उपासना लोकल्याण-मार्ग से विच्छिन्न होकर बन्ध्या हो जाती है। दीपावली प्रकाश का पर्व है। इस दिन जिस लक्ष्मी की पूजा होती है, वह गरुड़वाहिनी है-शक्ति, सेवा और गतिशीलता उसके मुख्य गुण हैं। प्रकाश और अन्धकार का नियत विरोध है। अमावस्या की रात को प्रयत्नपूर्वक लाख-लाख प्रदीपों को जलाकर हम लक्ष्मी के उलूकवाहिनी रूप की नहीं, गरुड़वाहिनी रूप की उपासना करते हैं। हम अन्धकार का, समाज से कटकर रहने का, स्वार्थपरता का प्रयत्नपूर्वक प्रत्याख्यान करते हैं और प्रकाश का, सामाजिकता का और सेवावृत्ति का आह्वान करते हैं। हमें भूलना न चाहिए कि यह उपासना ज्ञान द्वारा चालित और क्रिया द्वारा अनुगमित होकर ही सार्थक होती है-

सम्मान

घर में राशन खत्म होने को है, उसके अलावा और कोई नहीं जो दुकान जा कर कुछ सामान ले सके। वो खुद ही चली जाती लेकिन लोगों की ये तरह तरह की बातें अब उसे बर्दाश्त नहीं होती। अगर कोई अपना होता तो शायद इन सभी का मुंह बंद हो पाता। अकेली है कौन जाने कब क्या हो जाए!

इसी सोच में उर्मिला बैठी हुई थी कि गोविंद ने उसे पुकारा और उसकी आवाज सुनकर उर्मिला चौंक उठती है।

: अरे चौंक क्यों गई, सब ठीक है न ?

: हाँ भैया सब ठीक तो है, लेकिन घर में सामान खत्म होने को आया और मैं जा भी नहीं पा रही हूं।

: क्यों नहीं जा सकती, पैसे नहीं है क्या ?

: नहीं नहीं भैया पैसे की बात नहीं है। आप तो जानते ही हैं कि इनके गुजरने के बाद उन लोगों ने मुझे उनकी जगह नौकरी पर रख दिया। अकेली हूँ तो पैसे की कोई कमी नहीं होती। लेकिन मुझे लोगों की बातें सुनना अच्छा नहीं लगता। घर से बाहर जाती हूँ कि नहीं सब घूरने लगते हैं जैसे मैंने कोई बड़ा अपराध कर दिया है। आप ही बताइए भैया क्या करूँ?

: कुछ करने की जरूरत नहीं, ला दे समान मैं लाए देता हूँ।

गोविंद सामान लाने बाहर चला जाता है, और उर्मिला अपने बाकी कामों में लग जाती है। जब उसका पति उसके साथ था तो उसे किसी बात की चिंता नहीं थी। पति का प्यार जैसे उसके लिए सब कुछ था। पति के मरने के बाद सासरे ने उसे रिश्ता नहीं रखा और परिवार वालों ने ये कहकर ठुकरा दिया कि विवाह के पश्चात पति ही पत्नी का सर्वस्व होता है। बेचारी घर से दूर यहाँ आकर रहने लगी है। यहाँ के लोगों ने उसके खिलाफ तरह तरह की बातें करना शुरु करदी। फिर ये गोविंद और मीरा ही थे जिन्होंने उसके लिए लोगों से भिड़ गए। तब से उन लोगों के साथ उर्मिला का बहुत गहरा संबंध बन गया। उर्मिला गोविंद को भाई और मीरा को भाभी कहकर पुकारती है।

कुछ देर बाद मीरा उर्मिला के पास आती है कुछ सामान लिए। मीरा को देख उर्मिला उसको अंदर आने को कहती है।

: ये ले तेरा समान, जल्दी में थे तो मुझे दे गए। चल अच्छा ही हुआ बहुत दिनों से तेरे साथ वक्त नहीं बिताई। सुना और क्या हाल?

: हम्म अच्छी हूँ। भाई मेरे लिये बहुत तकलीफ सह रहे हैं। हर वक्त मैं उनको तकलीफ दे देती हूं तो बुरा लगता है।

: सिर्फ तकलीफ की बात या कुछ और? देख वो अभी मुझे बता रहे थे कि तू हमेशा किसी चिंता में रहती है ।

: तू तो जानती है सम्मान से बड़ा और कुछ नहीं होता एक नारी के लिए। लेकिन अगर वही सम्मान

को समाज कुचलने लगता है तो क्या होता है? लोगों के ये ताने अब बर्दाश्त के बाहर होते जा रहें हैं। क्या करूँ?

: शादी करले। यही एक बहुत बड़ा जवाब होगा उन लोगों के लिए।

मीरा की ये बात शांति को कुछ ठीक नहीं लगती और वो जानती है कि मीरा को मजाक करने के आदत भी नहिं है। उसका स्वभाव वर्तमान स्थिति में बहुत गंभीर है। इसीलिए उर्मिला थोड़ी धीमी आवाज में बोलती है .....

: क्या यही एक उपाय है?

: नहीं, तो समाज को अनदेखा कर। क्योंकि मैं खुद चाहती हूँ तू शादी करले इसलिए कह रही हूं। कब तक अकेली जिएगी?

: मैं अकेली जी लुंगी।

: पर कब तक?

: जब तक मैं समर्थ हूँ।

: और फिर ?

मीरा के इस सवाल का उर्मिला के पास कोई जवाब नहीं था। मीरा उसे देखती रही। कुछ क्षण बाद मीरा फिर वही सवाल पूछती है और उर्मिला कहती है -

: नारी की सुरक्षा के लिए क्यों उसे किसी मर्द की आवश्यकता होती है? किसी पुरुष के साथ किसी भी प्रकार का रिश्ता निभाने के लिए क्यों उसे किसी बंधन की आवश्यकता होती है? क्या वो स्वतंत्र नहीं जी सकती?

: कौन माना कर रहा है उर्मिला, किन्तु विवाह तेरा अधिकार है। क्यों नहीं करना चाहती? इतनी बड़ी सोच फिर मन में इतना डर क्यों ??

: पर...!!

: पर, क्या उर्मिला। तुझे जितनी सजा मिलनी था वो मिल चुकी। तेरे पति को जाना था वो चला गया। पर उसकी सजा तू क्यों भुगते? मत भूल ये लोग सिर्फ एक एक दर्शक हैं, जो बिना टिकट के तेरा अभिनय देखते हैं। तेरे हँसने पर हंसते हैं और तेरे रोने पर रोते हैं। मगर अपनी कुर्सी से उठकर तेरा साथ निभाने नहीं आयेंगे। जो करना है तुझे करना है। अपने लिए, अपने भविष्य के लिए। आगे तेरी मर्जी। मैं चलती हूँ।

यह कहकर मीरा वहाँ से चली गई। पर उर्मिला वहीं खड़ी रही। निस्तब्ध, चुपचाप। न जाने कितनी देर तक।

पिंकी सिंह, +3 तृतीय वर्ष

दीपावली

दीपावली, भारत में हिंदुओं द्वारा मनाया जाने वाला सबसे बड़ा त्योहार है। दीपों का खास पर्व होने के कारण इसे दीपावली या दिवाली नाम दिया गया है। दीपावली का मतलब होता है, दीपों की पंक्ति। इस प्रकार दीपों की पंक्तियों से सुसज्जित इस त्योहार को दीपावली कहा जाता है। कार्तिक माह की डीपावली अमावास्या को मनाया जाने वाला यह महापर्व, अंधेरी रात को असंख्य दीपों की रौशनी से प्रकाशमय कर देता है।

हिन्दू मान्यताओं मैं राम भक्तों के अनुसार कार्तिक अमवसा को भगवान श्री रामचंद्र जी चौदह वर्ष का वनवास काटकर तथा असुर जाती के रावण आदि का अंत करके अयोध्या नगर लौटे थे।

इसी दिन धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूर्य यज्ञ की समाप्ति हुई थी। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद सरस्वती जी को इसी दिन निर्वाण प्राप्त हुआ था। जैनियों के चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी को भी इसी दिन निर्वाण प्रप्त हुआ था। इसीलिय इस त्यौहार को महत्वपूर्ण माना जाता है।

एक अन्य लोक कथा के अनुसार देवी लक्ष्मी इस रात को अपनी बहन अलक्ष्मी के साथ भू-लोक में विराजमान करती हैं। आज तक लोग मानते आए हैं कि जिस घर में साफ-सफाई और स्वच्छता हो, वहाँ माँ लक्ष्मी अपने कदम रखती है, और जिस घर पर ऐसा नहीं होता है वहां अलक्ष्मी अपना डेरा जमा लेती है। वास्तव में यह त्योहार हमें अपने मन को और जीवन को प्रकाशित करने का संदेश देता है।

मोनालिसा महंती, +3 प्रथम वर्ष

मदारीपुर जंक्शन के उपन्यासकार बालेंदु द्विवेदी से बातचीत

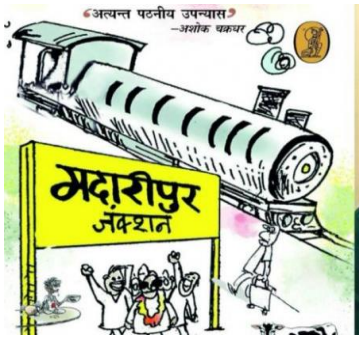

बालेंदु द्विवेदी को उनके पहले उपन्यास 'मदारीपुर जंक्शन' ने हिंदी उपन्यासकारों की श्रेणी में स्थापित कर दिया है। बालेन्दु द्विवेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के ब्रह्मपुर गाँव में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा पैतृक गाँव के मारुति नंदन प्राथमिक विद्यालय तथा लल्लन द्विवेदी इंटर कालेज में हुई। आपने इंटरमीडिएट की पढ़ाई (1989-1991) चौरी चौरा के ऐतिहासिक स्थल स्थित 'गंगा प्रसाद स्मारक इंटर कालेज' से की और आगे की पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक (1991-1994) और परास्नातक (1994-1996) की। आज वाणी प्रकाशन से प्रकाशित उनके जिस प्रथम उपन्यास 'मदारीपुर जंक्शन'(2017) की हिंदी साहित्य में धूम मची हुई है, उसकी नींव इलाहाबाद में पड़ी और वह परवान चढ़ा बहराइच जनपद में। बालेंदु को यह उपन्यास पूरा करने में लगभग साढ़े तीन साल लगे। आप निरंतर अपने जीवन की नकारात्मक परिस्थितियों से जूझते रहे, संघर्ष करते रहे लेकिन बालेन्दु के लिए यह संघर्ष भी संजीवनी की ही तरह था। देश के विभिन्न शहरों में भी इस उपन्यास का विमोचन हो चुका है और सोशल मीडिया पर अपनी छटा बिखेर रहा है। इस बार हम आपका साक्षात्कार 'मदारीपुर जंक्शन' के लेखक बालेंदु द्विवेदी से करवा रहे हैं।

प्र. - 'मदारीपुर जंक्शन' चर्चित उपन्यास है और अब तो इसका तीसरा संस्करण प्रकाशित हो चुका है, आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

उ. - मदारीपुर जंक्शन मेरा पहला उपन्यास है। मैं बार-बार कहता आया हूँ और आज भी दुहराना चाहूंगा की उपन्यास एक श्रमसाध्य और समयसाध्य काम है। यह एक दीर्घकालीन साधना है। यह आपकी रगों से सारा रक्त निचोड़ लेता है। मैं आपको बताना चाहूंगा कि इसे लिखने में मुझे लगभग चार साल लगे। आज जब मैं देखता हूँ कि कल के लेखक केवल छह महीन में उपन्यास लिख डालते हैं, तो हतप्रभ रह जाता हूँ। वे लिखने और छपने तथा प्रसिद्धि की बहुत जल्दी में हैं। मैं इस 'रेस' में कत्तई नहीं हूँ।

हाँ, 'मदारीपुर जंक्शन' के बारे में बस इतना ही कहना चाहूँगा कि दिसंबर 2017 में इसका पहला संस्करण आना और पहले चार महीने में इसका तीसरा संस्करण आना एक सुखद एहसास है और यह मेरे जैसे नवजात लेखक के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि भी है। साहित्यकारों-असाहित्यकारों और सबसे बढ़कर छद्म साहित्यकारों की ज़मात में, इस उपन्यास को पाठकों का ढेर सारा सम्मान और ढेर सारा प्यार मिल रहा है। पुरानी पीढ़ी के पाठक हों, चाहें युवा पीढ़ी के -सभी ने इसे हाथों-हाथ लिया है। सोच कर यही लगता है कि हिंदी उपन्यास के

माथे पर यह जो 'अब कम पढ़ी जाती है' की बिंदी चस्पा कर दी गई है, वो सरासर गलत है। इस बात का भी संकेत है कि हिंदी का पाठक वर्ग बेहतर रचनाओं की क़द्र करना जानता है -चाहें युग और समय कोई भी क्यों न हो।

प्र. - "छद्म साहित्यकारों की ज़मात" से आपका तात्पर्य क्या है?

उ. - मेरी दृष्टि में छद्म साहित्यकार वे साहित्यकार हैं जो साहित्य को कुछ भी नया देने या रचने में असमर्थ हैं लेकिन उनका दम्भ है कि साहित्य केवल उनके बल पर खड़ा है। इन छद्म साहित्यकारों ने प्रतिभावान लोगों के साहित्य को वैसे ही आच्छादित कर रखा है जैसे बादल कुछ समय तक सूर्य को घेर लेते हैं।

प्र. - अभी तक के संस्करणों की कितनी प्रतियां प्रकाशित हुई हैं?

उ. - प्रकाशन एक संस्करण में कुल 1800 प्रतियां प्रकाशित करता है जिसमें 1500 पेपरबैक और 300 लाइब्रेरी संस्करण होते है। मदारीपुर जंक्शन के प्रथम प्रकाशन से चार माह के भीतर कुल तीन संस्करण बाजार में आ चुके हैं।

प्र. - अपनी लेखन प्रक्रिया के बारे में कुछ बताइए?

उ. - मैं बहुत इत्मीनान से कथानक का चयन करता हूँ, बहुत मज़बूती से अपने पात्रों का गठन करता हूँ और एक लुहार और एक बढ़ई की तरह एक-एक वाक्य को ठोक-पीट कर आगे बढ़ता हूँ। जब तक मैं इन चीज़ों से पूरी तरीके से संतुष्ट नहीं हो जाता, मैं आगे नहीं बढ़ सकता। इस लिहाज़ से मैं आज के नए लेखकों से कोसों पीछे हूँ पर मुझे इसका तनिक भी गुरेज़ नहीं रहता, बल्कि नए लेखकों की इस तेज़ी पर खुशी ज़रूर होती है।

प्र. - इस उपन्यास की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली?

उ. - देखिये..! प्रेरणास्रोत को एक वाक्य में 'डिफाइन' करना बहुत कठिन काम है। फिर भी मैं इसके कुछ प्रेरणास्रोतों की ओर इशारा ज़रूर करना चाहूंगा। अगर विषय-वस्तु के लिहाज़ से देखें तो इस उपन्यास के पीछे का मूल प्रेरणास्रोत वह समाज है जिसमें मैं पैदा हुआ और पला-बढ़ा। जहाँ मैंने समाज के ऊँचे कहे जाने वाले लोगों को हेकड़ी दिखाते और नीची कही जाने वाली बिरादरी के लोगों को तिल-तिलकर संघर्ष करते और निरंतर मज़बूती से खड़ा होते देखा है। लेखकों के लिहाज़ से मेरे प्रेरणास्रोत मुंशी प्रेमचंद, हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ल, काशीनाथ सिंह जैसे लोग रहे हैं। जिस एक घटना ने मुझे पहली बार रचनात्मक लेखन के लिए प्रेरित किया, वह थी-इलाहाबाद के प्रवास के दौरान एक आकस्मिक आगज़नी की घटना; जिसने मेरे भीतर के सोये हुए व्यंग्यकार को जगा दिया।

प्र. - 'मदारीपुर जंक्शन' के नाटकीय मंचन के प्रति दर्शकों की कैसी प्रतिक्रिया है?

उ. - मदारीपुर जंक्शन के नाटकीय मंचन के प्रति दर्शकों का वैसा ही उत्साह रहा है, जैसा इसके पाठकों का। एक लगभग उपेक्षित मान ली गई विधा-'नाटक' में इस उपन्यास के प्रस्तुतीकरण के बावजूद, इसके हर मंचन में 'आडिटोरियम फ़ुल' रहा और दो घंटे के बिना ब्रेक वाले इस नाटक में दर्शकों की तालियाँ और सीटियाँ ख़ूब बजीं। इलाहाबाद के एनसीजेडसीसी लगभग 400 सीटों वाले तथा लखनऊ के बाबू बनारसीदास यूनिवर्सिटी के

800 सीटों वाले आडिटोरियम में सभी सीटें फ़ुल रहीं। इसके मारक संवादों ने दर्शकों के बीच एक स्थायी मुकाम बना लिया। यह दर्शकों के इसके प्रति उत्साह को ही दर्शाता है जबकि आम तौर पर नाटकों के लिए दर्शक नहीं मिलते। भविष्य में इसे गोरखपुर, उन्नाव, कानपुर, दिल्ली, मुंबई, वीरगंज और काठमांडू (दोनों नेपाल), मारीशस और यूएसए में मंचित करने की योजना पर कई संस्थाओं के साथ बात-चीत चल रही है।

प्र. - इस उपन्यास का सबसे विवादास्पद पात्र कौन है? और क्यों?

उ. - मेरे लिए यह कहना बहुत मुश्किल होगा कि इस उपन्यास का कौन सा पात्र विवादास्पद है और कौन नहीं। दरअसल चरित्रों को नायक, खल और विदूषक में तो बांटा जा सकता है, पर विवादास्पद और गैर-विवादास्पद में तो कत्तई नहीं। फिर एक उपन्यासकार के तौर पर मैं सभी चरित्रों का सर्जक रहा हूँ। इसके कई खल पात्र, खल प्रवृत्ति के होने के बावजूद अत्यंत आकर्षक हैं। उदाहरण के लिए छेदी बाबू को आप उपन्यास में देखेंगे तो पायेंगे कि अरे यह तो बहुत नकारात्मक चरित्र है, लेकिन मुझे यह चरित्र बहुत आकर्षक लगता है। कई पात्र जैसे बैरागी बाबू आदि नायक की तरह दिखने के बावजूद नायक नहीं हैं। चइता उपन्यास का नायक होते-होते रह जाता है। भिखारीलाल हीरो बनते-बनते विलेन से दिखने लगते हैं। इसलिए विवादास्पदता के लिहाज़ से मेरी ओर से इस सवाल का जवाब होगा-'कोई नहीं'!

प्र. - सोशल मीडिया पर उपन्यास के प्रति कैसी प्रतिक्रिया है?

उ. - सोशल मीडिया एक खुला मंच है, जिसपर हर कोई बड़ी बेफ़िक्री से अपनी बात रख सकता है। इसने नए साहित्यकारों को अपनी बात कहने के लिए एक मंच प्रदान किया है, इससे इंकार नहीं किया जा सकता। फिर, इससे साहित्य का भी एक बड़ा पाठक वर्ग जुड़ा है। इसके अतिरिक्त यह त्वरित प्रतिक्रिया का सबसे आसान माध्यम भी है। मेरा सौभाग्य है कि सोशल मीडिया ने 'मदारीपुर जंक्शन' को एक बड़े मुक़ाम तक पहुँचाने में खासी मदद की है। कई नए लोग इसके माध्यम से मुझसे जुड़े, कई ने इसके माध्यम से उपन्यास की बेहतरीन समीक्षाएं लिखीं। अधिकांश को इसके माध्यम से यह जानने में आसानी हुई कि उपन्यास कहाँ से छपा है और इसे कैसे खरीदा जा सकता है।

हालांकि यह भी सच है कि इसके माध्यम से मुझे हिंदी साहित्य जगत में प्रचलित आपसी लंगीमारी का भी पता चला। एकाध बार मुझे कुछ छद्म साहित्यकारों और आत्मप्रवंचित समीक्षकों से दो-दो हाथ भी करना पड़ा है लेकिन सोशल मीडिया पर जो एक बड़ा पाठक वर्ग है, उसने इसे खासा सम्मान दिया है। यही शायद मदारीपुर जंक्शन की सबसे बड़ी उपलब्धि है और मेरी भी।

प्र. - उपन्यास कैसे और कहाँ से खरीदा जा सकता है, इसके बारे में भी जानकारी दें?

उ. - मदरीपुर जंक्शन देश के सभी प्रमुख प्रतिष्ठानों पर उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त इसे वाणी प्रकाशन के वेबसाइट और अन्य 'ऑनलाइन साइट्स' से ख़रीदा जा सकता है।

दिवाली

दिवाली पर्व पौराणिक पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ है। यह हिंदुयों का प्रमुख त्योहार है। यह रोशनी और प्रकाश का त्योहार है। इस दिन घरों में दिए जलाये जाते हैं। यह त्योहार बुराई पर अच्छाई, अंधकार पर प्रकाश और अज्ञान पर ज्ञान की विजय को दिखाता है। दीवाली का सुभारम्भ कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष त्रयोदशी के दिन से होता है। इस दिन को धनतेरस कहते है। इस दिन नए नए बर्तन, आभूषण आदि खरीदने का रिवाज है। इस दिन घी के दिए जलाकर देवी लक्ष्मी का पूजन किया जाता है।

रामायण के अनुसार-अयोध्या के राजकुमार राम अपने पिता दशरथ की आज्ञा से 14 वर्ष का वनवास काटकर और रावण का वध कर के पत्नी सीता, अनुज लक्ष्मण और हनुमान के साथ अयोध्या लौटे थे। उनके स्वागत करने के लिए पूरी अयोध्या जलाकर तथा मिठाई बांटकर दिवाली मनाती है।

दिवाली के समय पर लक्ष्मी और गणेश की पूजा का विधान है, क्योंकि एक साथ पूजा करने से व्यक्ति को धन के साथ साथ उसे प्रयोग करने का ज्ञान भी प्राप्त होता है।

मोनालिसा साहू, +3 प्रथम वर्ष

।।श्रीः।।

अनाहार कमिश्नर की एक रिपोर्ट

लेखक - डॉ हृषिकेश पंडा

हिंदी रुपांतर : डॉ वेदुला रामा लक्ष्मी

'हिरण वन में रहता है। वन की घास खाता है। झरने का पानी पीता है। किसी का न खाता है न पीता है। फिर भी मनुष्य उसका शिकार करता है। इंसान को कौन है जो संतुष्ट कर सकता है?'
(नीति कथा)

एक

दो हज़ार ई दिसम्बर महीने का दूसरा दिन, भुवनेश्वर से प्रकाशित होने वाले कुछ समाचार पत्रों के प्रथम पृष्ठ पर बड़े - बड़े अक्षरों में खबर छपी थी। शीर्षक था 'नई सहस्त्राब्दी में राज्यवासियों को सरकार की भेंट - अनाहार (भूखमरी) से आदिवासी युवती की मृत्यु।' यही शीर्षक थोड़े फेर बदल के साथ सभी समाचार पत्रों में छपा था। समाचार का सारांश था, गमड़ा गाँव में एक महिने से भूखे रहने की वजह से प्रेमशीला भोई नामक एक महिला की दिसम्बर 1, 2000 को मृत्यु हो गई। एक महिने तक भूखी रहने के बावजूद उस महिला को दो मुठ्ठी अन्न भी किसी ने नहीं दिया। उसकी मृत्यु की खबर भी सरकार तक नहीं पहुँची। बिना पोस्टमार्टम किये आनन - फानन में अंतिम संस्कार भी कर दिया गया। कारण पोस्टमार्टम होता तो प्रेमशीला की भूखमरी के बारे में पता चल जाता। इस सिलसिले में कानून के रखवालों की एक सभा ने दिसम्बर दो तारिख को अन्य सभी कार्यों को स्थगित कर इस घटना पर विचार - विमर्श की माँग की। विचार - विमर्श का ये निष्कर्ष निकला कि इस घटना की निष्पक्ष तहकीकात के लिये इसकी जिम्मेदारी अनाहार कमिश्नर को दी जाये, एवं जाँच के बाद तीन महिनों वे भीतर अनाहार कमिश्नर इस संपर्क में अपनी रीपोर्ट पेश

करेंगे।
इसी आदेशानुसार मैं यह रीपोर्ट प्रस्तुत कर रहा हूँ।
तीन महिनों की जगह डेढ़ महिने में
अर्थात् जनवरी 11, 2000 को मैं ये रिपोर्ट पेश कर रहा हूँ।

दो

जनवरी 11 से 14 के भीतर मैंने ये तहकीकात की थी। इस संपर्क में पूर्व सूचना दी गई थी। जनवरी ग्यारह तारीख के दिन लगभग 10-15 गाँवों से करीब - करीब सौ बुजुर्गों को गमड़ा गाँव लाया गया। उन्हें कौन लाया, इस बात का अनुमान रिपोर्ट से लगाया जा सकता है। इसके अलावा अनेक राजनेता भी आये। इस वजह से सबूत एवं प्रमाण लेने में थोड़ी सी तकलीफ़ हुई। जनवरी चौदह तारीख के दिन जिल्ला मुख्यालय में जन साधारण की सुनवाई निर्धारित की गई एवं यह खबर चारों ओर पहुँचा दी गई। लेकिन उस दिन एक भी चश्मदीद गवाह नहीं आया।

प्रेमशीला की भूखमरी के संपर्क में बताने से पहले उन कुछ लोगों के बारे में बताना ही होगा जो कि वैसे तो इस घटना से जुड़े नहीं लगते पर वास्तविकता में जुड़े हुये हैं। इसके लिये चालिस साल पीछे जाना होगा। टिटलागढ़ रायपुर रेललाईन पर गमड़ा रोड नामक एक स्टेशन था। अभी गमड़ा रोड एक बड़ा शहर है, व्यापार का केन्द्र बन गया। वहाँ अब म्युनिसिपालिटी तथा तहसील कार्यालय भी हैं। सन् 1960 में गमड़ा रोड एक छोटा रेल्वे स्टेशन हुआ करता था। वहाँ बगर्ति शगड़िया नामक एक व्यक्ति की छोटी सी दुकान थी। पुरे दिन में मात्र एक पासिंजर ट्रेन ही वहाँ रुकती। वहाँ न कोई एक्स्प्रेस ट्रेन और न ही कोई मालगाड़ी रुकती। गमड़ा रोड से सत्रह किलोमीटर दूर एक गाँव पड़ता हैं। गाँव का नाम है गमड़ा। गमड़ा मतलब टीला, टीले पर होने की वजह से गाँव का नाम पड़ा गमड़ा। उस समय वहाँ घना जंगल था। शाल, पीपल, केन्दू, टीक, करंज आदि सौ - सौ वर्ष पुराने पेड़। रात में बाघ निकलते थे। हर साल बाघ द्वारा एकाध व्यक्ति का शिकार हो जाने का समाचार पत्रों में भी है। इसीलिये जब कोई व्यापारी या यात्री रात को गमड़ा रोड पहुँचते तो स्टेशन में रखे गये एकमात्र बेंच पर सोकर रात बिताते। रात को बगर्ति दाल भात बना देता।

गोविंद भुलिया जाति से जुलाहा था। उसके मातापिता, भाई-बहन सब बुनाई का काम जानते थे। कपड़े बुनते थे। गोविंद भुलिया बुने हुये कपड़ों की गठरी कंधे पर लादे ट्रेन में घूम - घूमकर बेचता। थोड़े से पैसे जमा होते ही वह गमड़ा रोड स्टेशन के पास ईंट, मिट्टी एवं खपरे का घर बना कर वहाँ कपड़े बेचने लगा। कपड़े तो अधिक नहीं बिकते थे, इसीलिये दाल, चावल, नमक, तेल तो कभी केला, कंद या फिर पका कुम्हड़ा भी रख लेता। साल 1960 तक गमड़ा रोड के मात्र दो स्थायी निवासी थे गोपाल बगर्ति एवं गोविंद भुलिया।

उसी समय गमड़ा रोड में दो और परिवार पहुँचे। पहला परिवार जलंधर सिंह का था। जलंधर सिंह के पिता पेशावर सिंह रायपुर इलाके में एक जंगल के ठेकेदार के यहाँ ड्राइवर था। ठेकेदार लकड़ी का गैर कानूनी धंधा करता था। बीच - बीच में वह भी लकड़ी चुरा कर बेच देता था। इस तरह लकड़ी बेच-बेच कर उसने एक ट्रक खरीदी। एक दिन इसी तरह लकड़ी ले जाते हुये छतीसगढ़ इलाके में वह पकड़ा गया। पहले लकड़ी चोरी होती तो दूसरे ठेकेदार सहायता करते थे। परंतु अब पेशावर सिंह ट्रक का मालिक होने की वजह से किसी दलाल ने उसकी मदद नहीं की पेशावर सिंह को जेल हो गई। वह जेल में छः साल रहा। इन छः वर्षों में पेशावर की पत्नी ने दो बेटों और एक बेटी को जन्म दिया। छः महिने पूरे होने से पहले ही बेटी मर गई। लोगों का कहना था कि माँ ने अव्यवस्थित अवस्था में होने एवं उसको पाल न सकने की वजह से उसका गला घोंट कर मार दिया।

जेल से निकल कर पेशावर घर पहुँचा एवं पहुँचते ही पत्नी और बेटे को सामान समेटने के लिये कहा। सामान के समेटते समय वह एक ट्रक चुरा कर लाता हैं एवं सारा सामान उसमें लाद देता हैं। वह बड़ी हड़बड़ी में था। 'जल्दी आओ, जल्दी आओ' कहते - कहते सारा सामान ट्रक में लद गया और उसकी पत्नी अपने तीन बेटों को ले कर केबिनेट में बैठ गई। पेशावर इतना परेशान एवं डरा हुआ था कि अपनी पत्नी और दो बेटों के संपर्क में विचलित होना तो दूर उसके बारे में सोचने का भी समय न था।

पेशावर गमड़ा रोड़ पहुँचते ही बगर्ति के दुकान में पत्नी एवं छोटे बेटे रायपुर को छोड़ बड़े दोनों बेटे जलंधर एवं कलिन्दर के साथ निकल गया। ट्रक चेसिस के नंबर बदल कर रात को लौटा। तब तक उसकी पत्नी ने बगर्ति की दुकान में प्रवेश पा लिया था अर्थात चूल्हा चौका सम्हाल लिया था। दो दिनों में ही उसकी दुकान के हिसाब किताब को समझ कर सौ रुपये में दुकान को खरीद लिया।

पेशावर ने बगर्ति से कहा 'सिर्फ इतना ही नहीं। तुझे मैं डिपो मैनेजर बना दूँगा। तू मेरे लकड़ी के डिपो में रहेगा। वहाँ अधिक पैसे कमा लेना। बगर्ति ने अपनी मोटी बुद्धि से कहा, 'मैं तो लकड़ी के व्यापार के सिलसिले में कुछ नही जानता हूँ' और यदि लकड़ी के व्यापार में इतना फायदा है तब तुमने मेरी यह छोटी सी दुकान क्यों खरीदी?'

पेशावर ने कहा कि 'ये बात तुम न समझ पाओगे। वह जो काम समझ सकता हैं वही करें। अर्थात कहाँ अच्छे पुराने पेड़ हैं उनका पता लगाये। ये काम वह समझ ले। बाकी परमिट लाना, लकड़ी बेचना, ये सब पेशावर खुद समझेगा।

तीन

इस घटना के एक साल के भीतर ही एक और परिवार गमड़ा रोड पहुँचा। जहाँगीर का परिवार। जहाँगीर रायपुर रेल्वे स्टेशन एवं उस रास्ते जाने वाले पैसेंजर ट्रेन एवं मालगाड़ी में चोरियाँ करता था। बचपन में पैसेंजर ट्रेन में जूता, चप्पल, बैग, सूट्केस चुरा कर उसने अपना चोरी का धंधा शुरु किया। बीस साल का होते - होते वह मालगाड़ी से वैगन भर की चीजें चुराने लगा। अर्थात चोरों एक बड़े गैंग का नेता बन चुका था। एक बार इसी तरह चोरी करते समय निहत्थे गार्ड को पहले छुरी एवं बाद में गोली मार दी थी। कत्ल के बाद वह सोलह साल की अपनी प्रिय वेश्या के साथ, वेश्या पाड़ा के एक शराब व्यापारी गराख की जीप लेकर भाग गया एवं गमड़ा रोड़ स्टेशन आ पहुँचा। वहाँ वह पेशावर की दुकान में रहने लगा। शराब के लालच में पेशावर ने उसे ये कहकर आश्रय दिया कि 'जितने दिन चाहों रह सकते हो' । इसके अलावा' जिस वेश्या को जहाँगीर ने अपनी पत्नी बताया था उसके प्रति पेशावर एवं उसका बेटा जलंधर दोनों आकर्षित हो गये थे। पेशावर की पत्नी को लगा अब एक घर में रहना मुमकिन नहीं हैं, इसीलिये उसने गोविंद भुलिया से बात की। दो सौ रुपये एवं धमकी कि वजह से उसने अपनी दुकान जहाँगीर को बेच दी। फिर से गाड़ी में, हाट में घूम - घूम कर हाथ से बने कपड़े बेचने लगा। जहाँगीर उसकी दुकान में दाल, चावल के अलावा शराब भी बेचने लगा एवं लकड़ी के व्यापार में पेशावर का साथी बन गया। इन पैसे से दोनों रेल्वे की खाली जमीन पर कब्जा करने लगे। उस जमीन पर दोनों ने लकड़ी का गोदाम, लकड़ी काटने की मशीन एवं अपने अधीन काम कर रहे कामगारों के लिये घर बनाकर भाड़े में चलाने लगे। एक दिन पेशावर चोरी की लकड़ी का ट्रक लेकर जो गया लौटा ही नहीं। उसकी और उसके चोरी के ट्रक की कोई खोज खबर नहीं मिली। उसके इस तरह लापता होने के पीछे जहाँगीर का हाथ है ऐसा उसके परिवार वालों को विश्वास हो गया। इसके बाद दोनों परिवारों के बीच कड़वाहट बढ़ गई। यहाँ तक कि जहाँगीर ने लकड़ी चोरी एवं व्यापार का अलग बंदोबस्त कर लिया। जहाँगीर के बच्चे हुये और वे भी बचपन से ही इस धंधे में लग गये।

दोनों परिवारों का व्यापार लगभग बराबर चल रहा था। जंगल से लकड़ी काटना एवं बेचना सन् 1965 - 70 में प्रमुख व्यवसाय था। दस - दस रुपये की मजूरी दस मजदूरों को दो तो वे दो सौ रुपये के पेड़ काट कर डिपो में डाल जाते। मशीन की कटाई के बाद इसी लकड़ी का मूल्य 500 रुपय हो जाता। कभी - कभी मजदूरों को अपनी जरुरतों के लिये 10 रुपये की पेशगी लेनी पड़ती और इतना भी वे लौटा ना पाते थे। ऐसे में महिने के अंत में 100 रुपये पर 10 रुपये का सूद देना पड़ता । यहाँ डिपो में देशी शराब का धंधा भी चलता। ये शराब का धंधा भी इन दो परिवारों का था। पहले गाँव वाले घर में ही चावल की शराब बना लेते। अब इन दोनों परिवारों ने मिलकर आबकारी विभाग के अधिकारियों को रिश्वत खिला - पिला कर अपने बस में कर लिया। लोगों को बाँध लिया। फलस्वरुप दोनों परिवारों का शराब का धंधा चल पड़ा। आबकारी अधिकारियों

को खूब प्रशंसा मिली। देसी शराब मतलब रेक्टिफ़ाईड स्पिरिट में पानी और रंग मिलाकर बेचना ही तो था। इन लकड़ी व्यापारियों से शराब पीने की वजह से मजदूरों के लिये पेशगी कि रकम चुकाना नामुमकिन सा हो चला था। फिर भी वे ये न समझ पाये कि उन्हें ठगा जा रहा है। समय से पहले हाथ में रुपये उनके
लिये बहुत बड़ी बात थी। बोरी उड़द बेचने से तीन रुपये मिलते थे। और उसकी खेती में चार महिने लगते थे। पर एक रात पेड़ काटते तो आठ आने मिलते। 15 दिन पेड़ काटने से 3 रुपये मिल जाते। हरदिन तो पेड़ न कटते थे। 15 दिनों में छः दिन पेड़ काटने का काम मिलता था।
इन सबके बावजुद गमड़ा गाँव में सन् 1980 तक भूखमरी की कोई बात सरकारी कागजों में न थी। और ना ही मेरे द्वारा लिये गये सबूतों एवं प्रमाणों में। इससे पता चलता है कि उस समय तक जंगल से पेड़ों की कटाई जोर -शोर से शुरु हो चुकी थी। ये भी ध्यान देने की बात है कि इसी समय से उस प्रांत में बारिश कम होने लगी थी।

इस समय की एक और बात भी देखने लायक है। गमड़ा रोड़ बढ़ने लगा एवं वहाँ एक नगरपालिका बनी। इसी बीच जलंधर एवं जहाँगीर इस अंचल के दो प्रतिद्वन्द्वी जननेता के रुप में प्रतिष्ठित हो चुके थे, और इनका कोई प्रतिद्वन्द्वी न था। एक न्यायपालिका के लिये निर्वाचित होता तो दुसरा नगरपालिका का चेयरमैन बनता। एक इस दल में होता तो दूसरा उस दल में। अभी दोनों इसी तरह दो अलग - अलग दलों में हैं। एवं दो पदों को बाँट लिया है। इसीलिये मैं इस बात को भली भाँति जानता हूँ कि अगर मैंने दोनों का इतिहास बताया तो वे अवश्य क्रोधित होंगे। अतः ये रिपोर्ट अनेक अक्षेपों एवं आलोचना की शिकार होगी इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है।

चार

गमड़ा गाँव में दो मुहल्ले हैः गमड़ा एवं छोटा गमड़ा। गमड़ा मुहल्ला थोड़ा ऊँचा है, वहाँ तीस कंध परिवार हैं। ये बुड़का वर्ग के कंध है। छोटे गमड़ा मुहल्ले में ग्वाले, जुलाहे, तेली, कुलथा, ब्राम्हण ऐसे 20-21 मिले - जुले परिवार हैं। गमड़ा पंचायत का कार्यालय छोटे गमड़ा गाव में हैं।
प्रेमशीला के पिता भाट था। इकतारे की सारंगी पकड़ कर, मेले में अपने हाथ से बनाये ठाकुरजी की मूर्ति पकड़ कर गाँव - गाँव गाता फिरता। भीमासीढ़ी या कंधो की जन्म कथा और रामायण महाभारत की कहानियाँ सुनाते - सुनाते वह गाँव - गाँव घूमता। पहले जमींदार उसके रहने, खाने-पीने की व्यवस्था करते। जमींदारी प्रथा के खत्म होते ही वह गरीब हो गया। इसी बीच पूर्णा से रिश्ता लेकर मध्यस्थ धंगरा माझी आ पहुँचा। प्रेमशीला का भाई न था। भाटों के गीत और पुराण पवित्र माने जाते थे, इन्हें पिता पुत्र को सिखाता था, बेटियों के लिये ये गीत सीखने की मनाही थी। ऐसे में बेटे का ना होने, जमींदार के न होने की वजह से आर्थिक कठिनाइयों आदि से पिता दुःखी था। प्रेमशीला देखने में सुंदर एवं लचकदार थी पर थी बड़ी परिश्रमी। पिता चारण बनकर घुमते

और दोनों माँ बेटी खेती बाड़ी किसानी की सारी बातें सम्हालती। जंगल से दलालों के पेड़ काट लेने के बाद माँ बेटी ने दो एकड़ बंजर जमीन को खोदकर जोत कर खेती के लायक बना दिया। बाप थोड़े पैर और लंबे करता तो प्रेमशीला थोड़े भले से शादी कर सकती थी पर उस विषय पर थोड़ी और चिंता करने की पिता की न हिम्मत थी ना ही उत्साह। वहाँ कन्या देखना, देन - लेन की बात तय करना, धान का लेन - देन, पिठदि देने - लेन, गांठ, तिलक, मुँह दिखाई, घर आगमन, डाला भेजना, पीठ मोड़ लौटना आदि सारे काम हो गए। मोड़ो सरन का मतलब है शादी का मंडप खोलना एवं भात, मुर्गी का शोरबा खिलना। उस समयतक पूर्ण का संसार कर्जे में डूबा था। कर्ज चुकाने के लिये उसने जहाँगीर एवं जलंधर के बड़े बाबुओं के लिये पेड़ काटे। पर वह मजूरी कम पड़ने लगी। इसीलिये उसने बगर्ति बाबू से प्रेमशीला के गृहप्रवेश के प्रथम आषाढ़ के लिये हजार रुपये कर्ज लिया। हजार रुपयों के लिये हर महिने सूद 100 रुपये तय हुआ। हजार रुपये में से पुराने कर्ज चुकाने पर उसके पास बचे सिर्फ तीन सौ रुपये। उससे कुछ चावल, तेल और नमक खरीदा। प्रेमशीला को उसने समझा दिया था कि कर्जा उतारने के लिये उसे अधिक मेहनत करनी होगी अब और मजूरी मिलेगी नहीं। प्रेमशीला यह कर्जे की बात समझ नहीं पाई। उसके पिता ने कभी कर्ज न लिया था। उसके पिता के चारण गीतों में एक गीत था, कि कैसे कर्जा लेने की वजह से भीम जैसा शक्तिशाली पुरुष कुबेरे जैसे दुर्बल के पास नौकर बना रहा। प्रेमशीला ने वही बात पूर्ण की बतायी। उपदेश दिया कि, किसी भी तरह पूर्ण अपने कर्जे को उतार दे। घर खर्च के लिये उसे परेशान होने की जरुरत नहीं है। प्रेमशीला जंगल गई। हाट गई। शाल के पत्ते, केन्दू के पत्ते, धूप (झूणा), शहद, जामुन, आम, (छत्तू) छत्रक जिस दिन जो मिलता हाट में बेच आती। घर खर्च निकल जाता। जिस दिन कुछ नहीं मिलता, लकड़ी के दो-चार गठ्ठर जंगल से लाकर बेच देती। आश्विन - कार्तिक में अपने हाथों से तैयार की गयी जमीन पर जो धान की फसल हुई थी उसे वह घर ले आई। उस समय उसके पेट में आठ महिने का बच्चा था। फिर भी ढेंकी में धान कूट कर, पछोड़ कर चावल घर में रखा। उसके बाद वह और उठ न सकी। उठ न सकी मतलब और जंगल न जा
सकी पर हर दिन भात या खीर या मक्का पका देती। ऐसे ही एक दिन भात बनाते समय उसको प्रसव पीड़ा होने लगी। प्रेमशीला की माँ को खबर भेजी गई। वो आई। सुख प्रसव हुआ। बेटा हुआ। तीस दिन बाद बच्चे के जन्म केश काटे गये। तेल हल्दी लगाकर नहलाया गया। इष्ट देवी जाड़ेन बूड़ा के सामने चावल रखे गये। एक मुर्गा लाया गया। प्रेमशीला के पिता अपने पूर्वजों के नाम कहने लगे। जैसे ही हृदानंद नाम लिया गया, चावल में मुर्गे ने चोंच मारी और बेटे का नाम रखा गया हृदानंद। भोज के बाद, प्रेमशीला के माता - पिता के लौट जाने के बाद, पूर्ण ने बगल में बच्चे को उठाकर एक हाथ से भात की हाँडी में चटू से भात निकालते हुये बताया कि वो बगर्ति बाबू के पास गया था। जो उसने हजार रुपये कर्ज लिया था वह बढ़ - बढ़ कर दो हजार हो गये हैं। इस बीच उसने जो कमाया है, वह खींच तान कर हजार रुपये ही हो सका हैं। अर्थात और हजार रुपयों का कर्जा है। जिसे चुकाने का कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा। अतः वह बंधुआ मजदूर बनकर चला

जायेगा। प्रेमशीला इस हिसाब - किताब को समझ नहीं पाई। पर इतना समझ गई कि उसका भीम अब कर्ज के चक्कर में पड़ गया है। उसी क्षण वह झटके के साथ उठी और अपने बटे को पूर्ण से छुड़ा कर उसे दूध पिलाते - पिलाते सो गई।

पाँच पंद्रह दिन बाद पूर्ण ने जलंधर से 2000 रुपये उधार लिये। वही महिन में हजार पर 10 रुपये सूद पर। उसमें से हजार रुपये बगर्ति को दे दिये। जलंधर ने कागज पत्रों के खर्चे के लिये 100 रुपये रख लिये। पूर्ण ने लिख दिया कि वह बंधुआ मजदूरी के लिये आंध्र जायेगा। जलंधर ने और 200 रुपये गाड़ी भाड़े के लिये रख लिये। पूर्ण ने दो सौ रुपये से कपड़े लत्ते और एक बैग खरीदा। एक बोरी चावल खरीदा। प्रेमशीला को दो सौ रुपये दिये और सौ रुपये अपने पास रख लिये। धान एवं बंजर जमीन पर उसका ज्वार कट रहा था।

खुदाई वाले जमीन से धान की कटाई रहीं हुई थी। ऐसे ही एक दिन वह ट्रक के पीछे बैठ कर गमड़ा रोड स्टेशन चला गया। गमड़ा स्टेशन पर उस जैसे हजारों मजदूर थे। स्टेशन में जलंधर के भाई ने आंध्र के एक दलाल से पूर्ण का परिचय करा दिया। दलाल के साथ पूर्ण जैसे लगभग सौ लोग उस दल में थे। आंध्र से आया दलाल उड़िया नहीं बोल सकता था। गमड़ा गाँव से दस कि. मी. दूर एक गाँव से गंड जाति का एक व्यक्ति आया था, वह पहले अनेक बार आंध्र जा चुका था और तेलुगु जानता था इसीलिये वह दलाल और मजरूरों के बीच बिचौलिये का काम कर रहा था। इसके पहले पूर्ण रेल न चढ़ा था। अब रेल में बैठने के बाद वह बड़ा ही बैचेन हुआ। वहाँ तीन लोगों की सीट पर छः लोग बैठे थे और बाकी सब नीचे बैठे थे। पहले - पहले वह स्टेशन के नाम पढ़ रहा था। पर कुछ समय बाद वह और स्टेशन के नाम पढ़ नहीं सका क्योकि वह सिर्फ उड़िया अक्षर पढ़ सकता था। वह उड़िया और तेलुगु दोनों नहीं पढ़ पा रहा था कारण उड़िया अक्षर भी तेलुगु ढ़ंग से लिखे थे।रेलगाड़ी में वह शौचालय जाने से डरने लगा। पर जब बाद में जाना जरुरी हो गया तब वह कतार में खड़ा हो गया। उसकी बारी आते तक उसने देखा शौचालय बहुत गंदा हो चुका था। वहाँ उसने उल्टी कर दी और शौचालय जाने की डर से उसने और कुछ खाया ही नहीं। बहुत प्यास ना लगे तो पानी भी नहीं पिया। पहली बार रेलगाड़ी में चढ़ने की वजह से उसके साथ वाले भुलिया, ग़ौड़, कंद, गंडा, पहरिआ, बिंछाल और पाइक सब ने उसका मजाक उड़ाया। पहले से आंध्र गये हुये मजदूर हैदराबाद के बारे में बाते करते हुये चहक रहे थे कि वह एक बड़ा स्टेशन हैं। ये चर्चा रेलगाड़ि में चढ़ने के दुसरे दिन से जोरदार चल रही थी, पूर्ण को ये समझ मेंआ गया था कि अब बस वे पहुँचने ही वाले हैं। इस बीच आंध्र के दलाल का व्यवहार पूरी तरह बदल गया था। वह बड़ी ही बेरुखी से बात करने लगा था। एक हाथ में छड़ी लेकर वह भेड़ बकरियों की तरह मजदूरों को हाँक रहा था।

उस समय ट्रेन एक छोटे स्टेशन में रुकी थी। आंध्र के दलाल ने छड़ी लेकर तेलुगु में सब को उतर जाने को कहा। हालाँकि वो तेलुगु बोल रहा था पर सब उतर गये। वहीं स्टेशन में सबने अपने - अपने नित्यकर्म कर लिये। साथ में लाया खाना खा लिया। पूर्ण ने भी सत्तू खा लिया। स्टेशन में अन्य दलाल भी थे। सारे मजदूर तीन भाग में बँट गये। तीन तरह के तीन ट्रक में वे चल पड़े। पूर्ण एक
नदी के कछार में पहुँच गया। ईंटे की भट्टी का काम था। उसने पहले कभी यह काम न किया था। हाँ खपरे का काम किया था। ईंटों की भट्टी में पकाने का काम सीखने में ज्यादा समय नहीं लगा। पूर्ण मई में लौटा। उसने जो कुछ कमाया था उसमें से उधार चुका देने तथा अपने खर्चे निकाल लेने के बाद, पाँच सौ से कम रुपये थे। उसमें दो सौ रुपरों से उसने टिकट खरीदा। उसके कपड़े फट गये थे। इसीलिये कपड़े - लत्ते और जूता खरीदा। प्रेमशीला के लिये साड़ी, बेटे के लिये बिस्कुट और कपड़े खरीदकर जब वह घर पहुँचा तो उसके पास मात्र दो सौ रुपये थे। उस समय प्रेमशीला जंगल से कंदमूल लाकर पका रही थी और हृदानंद बरामदे में घुटनों के बल खेल रहा था। हाँ इस बार गमड़ा रोड़ स्टेशन से गमड़ा गाँव तक जाने के लिये जलंधर ने मुफ्त में ट्रक में नहीं चढ़ाया। इसीलिये पूर्ण पूरी तरह थक चुका था। फिर भी वह घर पहुँचकर खुशी से चिल्लाया। प्रेमशीला रसोई की बात भूल कर बैठी रह गई। हृदानंद को पूर्ण ने गोदी में उठा लिया और प्रेमशीला को बैग खोलने के लिये कहा। पूर्ण ने बड़ी खुशी से बिस्कुट पैकेट खोलकर हृदानंद को खाने को दिया। हृदानंद ने बिस्कुट को थू- थू कर थूक दिया। पूर्ण ने प्रेमशीला से बिस्कुट खाने को कहा। प्रेमशीला ने बिस्कुट को देखा। थोड़ा खाया और उसे उसका स्वाद बड़ा ही बेकार सा लगा। उसने भी उसे थूक दिया और ध्यान से देखा। उसमें फफूँद लग चुकी थी।
'बिस्कुट वाले ने भी तुझे ठग लिया'ऐसा कहकर प्रेमशीला ने बिस्कुट पैकेट फेंक दिया।

छः

1997 नवम्बर तक पूर्ण एवं प्रेमशीला के तीन बच्चे थे। हृदानंद को छोड़ एक बेटा और एक बेटी। इस बीच कर्जे के चक्कर में पड़ कर पूर्ण की जमीन पहले गिरवी और बाद में बिक गई। पूर्ण एक बार जलंधर और एक बार जहाँगीर का बँधुआ बनकर आंध्र गया एवं इस दौरान उसकी सेहत बहुत बिगड़ गई। उसकी पसलियाँ दिखने लग गई थी। उसे भूख नहीं लगती थी। 1997 नवम्बर तक पूर्ण का उधार बढ़ते - बढ़ते लगभग चार हजार रुपये हो गया था। जहाँगीर और जंलधर कोई भी अकेले पूर्ण को बधुँआ भेजने या चार हजार रुपये कर्ज देने के लिये तैयार न थी। इसीलिये पूर्ण और प्रेमशीला दोनों मजदूरी करने गये। छोटे गमड़ा गाँव के एक छोटे से चाय की दुकान में हृदानंद ने काम करना शुरु कर दिया। दोनों छोटे बच्चों को पूर्ण के छोटे भाई के घर में रखा गया। पाँच हजार रुपये उधार लिये। चार हजार चुका दिये। पाँच सौ रुपये छोटे भाई को दिये। और तीन - चार सौ रुपये लेकर वे ईंटा भट्टी में काम करने आंध्र गये। सारे रास्ते प्रेमशीला चुप रही। ना कुछ

खाया और पानी भी ठीक से न पिया। हाँ पूर्ण बड़े जानकार व्यक्ति की तरह व्यवहार कर रहा था। इस बार वे जहाँगीर के एक दलाल के साथ गये थे। पूर्ण के लिये इस बार कुछ अलग इस तरह से था कि वह अन्य मजदूरों के साथ लम्बे झोपड़ी में रह नहीं सका, कारण इस बार उसके साथ उसकी पत्नी थी। उस लम्बी झोपड़ी से दुर, नदी के कछार पर, अपनी अलग झोपड़ी बनाई, उसी नदी के कछार पर जहाँ पहले पूर्ण रह चुका था, हृदानंद के जन्म के बाद जब वह पहली बार बंधुआ बना था। पूर्ण के साथ उस समय आये कुछ और मजदूर भी पूर्ण की ही तरह अपनी पत्नी और बच्चों को साथ लाये थे और अलग - अलग झोपड़ियों में रहनें लगे थे।वे और उनकी पत्नियाँ जहाँ बूढ़ा - बूढ़ी लग रहे थे वही उन सब में प्रेमशीला ही युवती थी। पूर्ण और प्रेमशीला दिन में चालीस - पचास रुपये कमा लेते थे। उसमें से 25 रुपये उधार चुकाने में जाते थे और बाकी पंद्रह रुपये में से दस रुपये उन्हें मिलते।

प्रेमशीला की झोपड़ी की फर्श ईंटा भट्टी के टुटे ईंटों से बनी थी। उन्हें काली मिट्टी से जोड़ा गया था। ईंटा - भट्टी में लगने वाले कुछ काठ, कुछ बाँस और पुआल से घर की छत बनी। कुछ टूटी ईंटों और काली मिट्टी से घर की दिवारें बनी। झोपड़ी की ऊँचाई पूर्ण की कमर जितनी थी। उससे छोटी झोपड़ी होती तो पूर्ण को रेंगते हुये भीतर जाना पड़ता। कम ऊँचा होने की वजह से पूर्ण को झुक कर भीतर जाना पड़ता था। उससे ऊँचा होता तो झोपड़ी की दीवारें काठ और बाँस के बोझ को सह न पाती। झोपड़ी के बाहर चूल्हा था। उस चुल्हे में सिर्फ भात ही पकता था।
उस नदी के कछार में रहने वाले अन्य दंपतियों के झोपड़ी से प्रेमशीला की झोपड़ी दो दृष्टियों से अलग थी। पहला तो ये कि उसने एक छोटा सा बरामदा भी बनाया था। चार काठों को झोपड़ी के चारों कोनो में गाड़कर ऊपर एक छान बना सकती थी पर छः काठ ही थे इसीलिये दो को जरा आगे बढ़ाकर बरामदा बना लिया। और दूसरी बात ये थी कि वह हमेशा अपनी झोपड़ी को लीप - पोत कर साफ सुथरा रखती थी।

उस बरामदे एवं सफाई की वजह से ईंटा भट्टी के मालिक बाबू और उनके दोस्त आते - जाते उस घर में पहुँचते थे। धीरे - धीरे शाम को खाने और शाराब के साथ पहुँचने लगे। प्रेमशीला के बासी भात के साथ अपने द्वारा लाई हुई सूखी, भुनी मछली खाकर चले जाते और प्रेमशीला के लियें कुछ मछली छोड़ जाते। पूर्ण बेहोश पड़ा रहता। कभी - कभी तो पूर्ण की बेहोशी की हालत में वे प्रेमशीला पर बलात्कार करते या कहीं उठा कर ले भी जाते। कभी - कभी पूर्ण बेहोश नहीं होता, प्रेमशीला को ले जाते वक्त बेहोशी का नाटक करता। ऐसा जीवन जिया नहीं जा सकता ये प्रेमशीला जान चुकी थी। उसके पिता का बचपन का एक गीत उसे याद आ रहा था, जिसका सारांश था कि, पति नालायक हो तो पत्नी को ही पति का काम करना पड़ता है। उसे भगवान के पास जाना पाड़ेगा एवं वरदान माँगना पड़ेगा। पर, उस ईंटा भट्टी वाले नदी के कछार पर भगवान तो छोड़ो एक पेड़

भी न था। इसीलिये प्रेमशीला पैसे जोड़ने लगी। उस कमर तक ऊँची झोपड़ी के भीतर, इतने लोगों का अनधिकार प्रवेश, बलात्कार एवं सारा दिन और कभी कभी सारी रात बिन बुलाये लोगों के चले आने के बावजूद, झोपड़ी में कपाट न होने के बावजूद, दिनभर मेहतन करने पर प्रेमशीला ने एक एक पैसा जोड़ा और दलालों से रेलगाड़ियों के बारे में पता किया।

गाड़ी का किराया जमा कर लेने के बाद लगभग महिने के अंत में उसने पूर्ण से कहा कि महिने की वजह से या किसी और कारण से उसे बहुत रक्तस्राव हो रहा है। इसीलिये कोई न आने पाये। उस रात को प्रेमशीला पूर्ण के साथ ईंटा भट्टी से चली आई। स्टेशन से ट्रेन में बैठकर, थोड़ी दूर सफर करने के बाद एक और स्टेशन से गमड़ा रोड़ के लिये टिकट खरीद कर गाड़ी में बैठ गई। 1998 जून प्रथम सप्ताह में वे गमड़ा रोड़ स्टेशन पहुँचे। गमड़ा रोड़ स्टेशन पहुँचने पर दोनों प्रेमशीला एवं पूर्ण बूढ़ा - बूढ़ी लग रहे थे। हालाँकि उस समय उनकी उम्र 28 और 32 ही थी। समय की मार की वजह से, इतने बलात्कार के बाद गंदे परिवेश में रहते - रहते वे बूढ़े लग रहे थे। इन सभी तथ्यों के लिये मैं पत्रकार संजय सगड़िया को धन्यवाद देता हूँ। उन्होनें उन दोनों की बाते रिकॉर्ड की थी तथा उनका फोटो भी लिया था। मेरी जांच के वक्त उन्होंने मुझे ये सब सुनाया और दिखाया भी। मैंने उनसे पूछा था कि उन्होंने उस समय ये खबर क्यों नही छापी?
संजय ने कहा कि, ये बात उन्होंने अपने पिता से कही थी। पर उनके पिता ने उन्हें बहुत पीटा।उनके पिता बगर्ति सगड़िया भी एक बँधुआ दलाल थे और पूर्ण को पहले वे बँधुआ बनाकर भेज चुके थे।

सात

सन् 1999 में मैं एक बार अनाहार कमिश्नर के हिसाब से उस अंचल में गया था। तब तक गाँव के कई लोग कर्जे के पंजे में पड़ चुके थे। इसके पंद्रह वर्ष पूर्व मैंने इस अंचल में 1 साल के लिये काम किया था। उस समय लोग इस स्तर तक इतने अधिक कर्जे में डूबे न थे। जंगल भी इतने नष्ट नहीं हुये थे। उस समय जलंधर मात्र एक लकड़ी चोर था, तब उसका आर्थिक साम्राज्य इतना फैला हुआ न था। जहाँगीर एक गैंग कुली दलाल था। उनके नाम से जंगल और रेल्वे से चोरी के दो चार मुकदमें दर्ज थे एवं वे तथा उनके भाई, बेटे एकाध बार जेल भी जा चुके थे।
सन् 1999 तक इस अंचल की आर्थिक स्थिति बदल चुकी थी। इस अंचल में पड़ने वाले सूखे, भूखमरी एवं बँधुआ मजदूरी की खबरें बार - बार निकलने लगी थी। आश्चर्य की बात थी, इन सबके साथ उस अंचल में धान की अभावी बिक्री होने की खबरें आती थी।

गमड़ा रोड़ एक बड़ा शहर बन चुका था। वहाँ आसपास कुल मिलाकर पच्चीस मिल थे। इनमें से करीब - करीब पंद्रह मिल जलंधर, एवं जहाँगीर के परिवार के पास थे। उस अंचल के जितने गाँव में मैं घूमा हूँ, वहाँ लगभग 30 प्रतिशत पुरुष बँधुआ मजदूरी के लिये बाहर चले जाते। गमड़ा रोड़ में अनेक पक्के मकान बन चुके थे। कुछ होटल एवं लॉज भी खुल गये थे।

कुछ युवकों को छोड़, बाकी सब बँधुआ मजदूरी कर रहे थे। बँधुआ सबसे पहले उधार लेता है, जिसका सूद बढ़ता चला जाता हैं जिसकी वजह से वह चुका नहीं पाता। उसके बाद जमीन गिरवी रख देता है। 1999 तक जलंधर एवं जहाँगीर जैसे लोगों के पास गिरवी रखे जमीन का हिसाब - किताब रखना संभव नहीं था। इसीलिये बगर्ति शगड़िया एवं गोविंद भुलिया जैसे दलाल अपने पास रखते थे। जिसकी जमीन होती, वह उसी जो खेती करने के लिये दी जाती थी। किसान भी खुशी से इस आस में कि वह जमीन कभी न कभी तो फिर उसकी होगी मन लगाकर खेती करता। आधी फसल देकर, कुछ दिन बीतने के बाद और खेती करना संभव न होता था। अंत में किसान जमीन को बेच कर या उसे उसकी अवस्था में छोड़ कर पहले खुद और बाद में परिवार के साथ बँधुआ मजदूरी के लिये चला जाता है। पूर्ण एवं प्रेमशीला के बँधुआ होने की कहानी ऊपर कही गई कहानी से भिन्न नहीं हैं।

जलंधर एवं जहाँगीर की इजाजत बिना गमड़ा रोड़ से कोई भी मजदूर बाहर जा नहीं सकता। दूसरे प्रदेश के दलाल गमड़ा रोड़ के होटल या लॉज में जलंधर एवं जहाँगीर की अनुमती बिना ठहर नहीं सकता था। डुंगुरीपाली से टिटलागढ़ तथा केसिंगा से खरियार रोड़ तक किसी भी स्टेशन में इन्हें छोड़ किसी और का प्रवेश न था। उस समय विरोधी दल से जहाँगीर एवं सरकारी दल से जलंधर क्रमशः न्याय सभा के सदस्य एवं नगअरपालिका के अध्यक्ष थे। विरोध होने के बावजूद दोनों के बीच समझौता था।

जहाँगीर का रेल महकने में दबदबा था, इसीलिये रेल्वे के अधिकांश महाजनी एवं ठेकेदारी के कारोबार को वहीं सम्हालता था। उसने जलंधर को रेल्वे की जमीन से खदेड़ दिया था। रेल्वे के चार हजार गैंग कुलियों के पास बुक उसके पास बंधक थे। रेल्वे में लकड़ी की हेराफेरी उसके जिम्मे में थी। रेल्वे की जमीन पर उसने घर बनाया और अपने दलालों को घर किराये में दिया और कुछ जमीन बेच भी दिया था। उसके भाई एवं बेटों के बीच कारोबार बँट चुका था। जहाँगीर धान मिल एवं आरी मिल की देख रेख कर रहा था। उसका भाई आलमगीर लकड़ी चोरी एवं गैंग कूलियों के कार्यों की समझता था। उसका बेटा औरंगजेब जमीन की गिरवी एवं शराब के व्यापार की देखरेख करता था और एक बेटा बाबर गाँव के बँधुआ मजदूरों के कर्जे एवं उनको बाहर भेजने की बातों पर नजर रखता। इसी तरह जलंधर आरी मशीन एवं धान मिल की देखभाल करता था। भाई सचिन्दर शराब के व्यापार एवं लकड़ी चोरी का धंधा देखता और एक भाई महिन्दर, जमीन की गिरवी, धान की आमदनी एवं बंधकों का हिसाब किताब रखता। रायपुर सड़कों की ठेकेदारी का काम करता था। बँधुआ मजदूरों के विषय में जलंधर एवं जहाँगीर के भीतर एक साफ सुथरा समझौता था। कोई किसी के ट्रक को रोकेगा नहीं। कोई किसी के मजदूर को रखेगा नहीं। यदि इस विषय पर द्वंद्व होता, तो उसका समाधान बाद में होता। लेकिन 'मैं जहाँगीर का आदमी हूँ'या 'मैं जहाँगीर का

आदमीहूँ' कह भर देने से विवाद आगे नहीं बढ़ता और बँधुआ मजदूरों को कोई रास्ते में नहीं रोकता था।

इसी भीतर गमड़ा रोड़ के आस - पास के गाँ में हीरा, नीलम, माणिक, पुखराज, लहसुनिया, मर्कत, सोना और चाँदी मिला था। जंगल के साफ होने के बाद वहाँ के लोग बड़े - बड़े पेड़ों की जड़ो को खोद कर ईंधन बनाने ले गये, इसी समय वहाँ धातु और पत्थर मिले। इस व्यापार पर भी जहाँगीर एवं जलंधर के परिवारों ने कब्जा कर लिया। बड़े आश्चर्य की बात हैं कि ऐसे मुनाफे के धंधे के बावजूद, आसानी से मिली हुई संपत्ति के बावजूद वे सूदखोरी और मजदूरों को बंधक बनानें का व्यवसाय छोड़ न सके।

आठ

1998 दिसम्बर एवं 1999 जनवरी में इस अंचल का दौरा करते समय मैंने जो देखा उसका एक विवरण मैंने दिया था। उसके अंतर्गत गमड़ा रोड़ में बँधुआ मजदूरों का दूसरे प्रदेश जाने के संबंध में मैंने जो लिखा था उसका सारांश देना यहाँ बड़ा ही प्रासंगिक होगा।

उस दिन रात को कुर्त्ता पायजामा पहन अपने आप को चादर में लपेट कर मैं गमड़ा रोड़ शहर में घूम रहा था। रास्ते में बहुत सी गाड़ियों में लोगों को लाद कर ले जाया जा रहा था- खुला ट्रक, बड़ा ट्रक, छोटा ट्रक, छोटा बस, ट्रेकर हर तरह की गाड़ियाँ। रात सात बजे से नौ - दस बजे तक लोगों को लाद कर ले जाया जा रहा था। हर गाड़ी के साथ मोटर साइकल पर बैठे दो युवक भी थे। गाड़ियों को देखकर समझ में आ रहा था कि, गाड़ी के तीन गंतव्य हैः गमड़ा रोड़ रेल स्टेशन, जलंधर का घर एवं जहाँगीर का घर। मैंने जहाँगीर का घर देखा बड़ा आहता, बड़ी जगह, लोगों ने कहा लगभग दस एकड़ होगा। मेरा अनुमान था पाँच एकड़ होगा। सारी जमीन रेल्वे की थी। उसके घर के सामने करीब बीस गाड़ियाँ होगी। गाड़ियाँ आ रही थी, जा रही थी। गाड़ियों में आदमी, औरत, बच्चे, हर उम्र के हर प्रकार के लोग थे।

जलंधर के व्यापार की जगह छोटी थी, मेरे साथ तहसीलदार थे। उन्होंने कुछ लोगों से पता किया था कि जलंधर के भाई अलग - अलग जगहों में अलग - अलग व्यापार करते हैं। लकड़ी चोरी एवं काटने की मशीन, सूदखोरी का व्यापार, रत्नों की चोरी और बंधुआ कारोबार ये सब अलग अलग जगहों में होता हैं। धान मिल एवं स्टोरेज ऐजेन्ट का काम भी अलग जगह में हैं। ऐसा जान पड़ता था कि जलंधर का बँधुआ भेजने का काम जोरों से चल रहा था। कुछ समय देखने के बाद पता चला कि जलंधर के इंसानी - गोदाम में लोग कुछ समय के लिये रहते थे। मजदूर जिस गाड़ी में आते, प्रायः उसी गाड़ी से लौट आते, उस इंसानी- गोदाम में सिर्फ आधा घंटा रहते । इस हिसाब से देखे तो जहाँगीर एवं जंलधर के बंधुआ कारोबार में थोड़ा सा फर्क था। जहाँगीर के पास आने वाले बंधुआ उसके इंसानी- गोदाम के भीतर एक - दो दिन या कभी - कभी उससे ज्यादा भी रहते

थे। किंतु जंलधर के घर मजदूर आते और तुरंत भेज दिये जाते। इसी वजह से जहाँगीर के घर के आमने 20 गाड़ियाँ रहती तो जंलधर के घर के आमने मात्र पाँच। फिर भी जंलधर और जहाँगीर दोनों का इंसानों का कारोबार बराबरी पर चलता था। मेरे हिसाब से जंलधर का कारोबार थोड़ा बड़ा था। रात 10 बजे मैं गमड़ा रोड़ स्टेशन गया। वहाँ लोगों की भीड़ थी। वहाँ घूमते - घूमते लोगों की बातें सुनी। लोगों से बात कर रहे एकाध बाहरी दलालों को भी पहचाना। उनके हाथ में ब्रीफकेस था और ये दामी ब्रीफकेस मजदूरों के बोरे, गठ्ठर एवं पेटियों से अलग चमक रहें थे। तभी मैंने अनुमान लगाया कि कोई मेरा पीछा कर रहा हैं। मैं खड़ा हो गया और पलटकर उसे देखा। उसके चेहरे एवं वेश - भूषा से मैंने अंदाज लगाया कि ये उन्हीं युवकों में से एक है जो मोटर साईकल पर गाड़ियों के साथ थे। उसकी पतलून में बहुत सारी जेब थी। वह पच्चीस - तीस वर्ष का लबा, तगड़ा जवान था। मैंने पूछा कि वह मेरा पीछा क्यों कर रहा हैं? आश्चर्य की बात थी कि उसने मुझे धमकी नहीं दी। उसका हाथ पतलून के दाहिने जेब में गया। उसने बड़ी शाँति से कहा कि ये उसकी जिम्मेदारी है कि उनके मजदूरों को कोई और दलाल न ले जाये। वह यही देख रहा है। मैं क्या कर रहा हूँ, वह समझ नहीं सका, पर हाँ, यदि मैं उसके धंधे में दखल दूँ तो वह मुझे मार देगा। मैंने अपनी चादर हटाई, बड़ी ठंड की वजह से एक बार काँप गया और अपने पहने हुये पतले - कुर्ता, पायजामा उसें दिखा दिया। 'देखो', मैंने कहा, 'मैं दलाल नहीं हूँ, तुमने जान ही लिया होगा। अब तुम्हारी जेब में जो रिवॉल्वर है उसे दिखाना जरा'। बहुत सारी जेबों वाली जीन्स और जैकेट पहने उस लड़के ने अपनी दाहिनी जेब से रिवॉल्वर निकाल कर दिखाते हुये कहाः 'यहाँ से चला जा, नहीं तो देखना'। मैं थोड़ा हँस पड़ा और पूछाः मैं कौन हूँ, बोलो तो ?''

अचानक लड़के के रिवॉल्वर जेब में भरी और, रेल लाईन पार करते हुये भाग गया। घड़ी देखा तो पता चला रात के ग्यारह बज चुके थे। उसी दिन शाम को मैने थानेदार को खबर दी थी कि, वे थाने में ही रहें। पर किस तरह की तहकीकात के लिये मैंने उन्हें थाने में रोक रखा था, वे जान नहीं पाये। यहाँ एक और बात बताना प्रासंगिक होगा। यहाँ सरकारी चावल दुकान में 2 रुपये किलो से लेकर पाँच रुपये किलो तक का चावल मिलता है। हर साल 30 प्रतिशत लोग छः महिने के लिये बंधुआ चले जाते हैं। और उन छः महिनों में उन्हें चावल बेचे गये ऐसे रिकार्ड मिलते हैं। इस मामले में कुछ अभियोग मेरी नजर में आये। कुछ छुटपुट डीलरों के विरुद्ध कार्यवाही भी हुई थी। पर गमड़ा रोड़ के सारे स्टोरेज एजेन्ट जहाँगीर एवं जंलधर के थे, कुछ अपने नाम पर तो कुछ दूसरों के नाम पर। चावल कहीं नहीं जा रहा था। उत्पादन कम होने लगा था। केवल कागजों में धान खरीदा जा रहा था। भारतीय खाद्य निगम द्वारा चावल का खरीदना, राशन की दुकान पर बिकना, सबकुछ कागजों में था। इस बात को मैं दो वर्षों से कहते आ रहा हूँ पर कोई मेरा विश्वास नहीं करता। इसीलिये मैं कुछ डीलर एवं मिल मालिकों की जाँच करने लगा। आज क्या जाँच होगी ये थानेदार नहीं जानते थे। शाम सात बजे थाने में कोई अधिकारी न थे एवं मैं तहसीलदार के साथ

गमड़ा रोड़ में घूम रहा था। बाद में मुझे समझ में आया कि, मोटर आईकिल पर मजदूरों के साथ चलने वाला हथियार बंद युवक जब मेरा पीछा कर रहा था। तब इस बात को जान कर थानेदार थाने के बाहर निकले। वह लड़का थानेदार को देख कर भाग गया। थानेदार के आने के बाद हमने एक दलाल को गिरफ्तार किया। मतलब थानेदार ने गिरफ्तार किया और रेल्वे पुलिस को सौंप दिया। रात बारह बजे मैं थाने में बैठा था। 100 बँधुआ मजदूरों को लेकर एक मिनी बस थाने के पिछवाड़े पहुँची। ड्राइवर की सीट से जंलधर का भाई रायपुर उतरा। थानेदार ने तुरंत रायपुर से बात की। मैं अंधेरे में बैठे - बैठे सुन रहा था।

उस रात रायपुर पुलिस हिरासत में रहा। आंध्र से आया मजदूरों का दलाल रेल्वे पुलिस की हिरासत में रहा। उसकी शिकायत की वजह से जहाँगीर का एक बेटा भी हिरासत में रहा। रात भर गमड़ा रोड़ एवं आस - पास से इलाकों में खलबली मची रही। मोटर साइकल पर बंदूक लेकर घूमने वाले आवारा लड़के छिप गये। जहाँगीर का बेटा एवं जंलधर का भाई रात भर थाने में रहे ये छोटी बात न थी। पर इस मामले में कानून बहुत ढ़ीला है। अगले दिन मेरे गमड़ा रोड़ छोड़ दूसरे अंचल में जाते ही वे थाने से जमानत पर छूट गये। प्रेमशीला की भूखमरी से मृत्यु के वक्त दो मुकद्दमे रहे थें। उसमें से एक रायपुर पर चल रहा था। जो अभी विरोधी दल या एक वरिष्ठ नेता और प्रवक्ता हैं।

नौ

1998 जून में पूर्ण और प्रेमशीला गमड़ा लौट चुके थे। हालाँकि ये दोनों गोविंद भुलिया एवं जहाँगीर से छिप रहे थे, पर साहुकार लोग इनके लौटने की बात जानते थे। किन्तु उधार चुकता करने के लिये तकादा नहीं करते थे। सच कहा जाये तो, साहूकारों का कर्ज चुक गया था, किन्तु, ये बात साहुकारों ने छिपा रखी थी। इसीलिये उधार चुकता कर देने के बावजूद पूर्ण एवं प्रेमशीला डर - डर कर जीवन यापन कर रहे थे।

प्रेमशीला के भूखमरी की जो खबर छपी थी, उसमें इस बात का भी उल्लेख था कि, पूर्ण भोई काएक गुर्दा आंध्रप्रदेश में चुरा लिया गया था। पूर्ण 2000 जनवरी में मर गया एवं उसका शव दाह भी संपन्न हुआ था। उसका गुर्दा चोरी हुआ या नहीं यह अब कहना संभव नहीं है। कुछ लोग कहते थे कि उसके पेट के निचले हिस्से में एक कटा दाग था, किन्तु इसके कोई बात प्रमाणित या अप्रमाणित नहीं होती। छोटा गमड़ा गाँव में एक आँगनवाड़ी केन्द्र हैं। वहँ के आँगनवाड़ी कर्मी एवं रसोइया दोनों ही भुलिया जाति के थे। भूलिया अनुसूचित जाति के नहीं हैं। फिर भी कंध जाति के लोग उनके हाथ का पका नहीं खाते। हाँ, बच्चों पर ये नियम लागू नहीं होते हैं। इसीलिये गमड़ा गाँव के लोग उनके गाँव के बूढ़ों के हिस्से में जो आता हैं जैसे सुखा दाल, चावल आदि आँगनवाड़ी

केन्द्र से लाकर गाँव में बाँट लेते हैं। 2000 दिसम्बर में प्रेमशीला की भूखमरी की खबर छपने से 15 दिन पहले उस गाँव में भूखमरी की एक और खबर छपी थी। ये खबर थी गजेन्द्र भोई की। गजेन्द्र भोई की पत्नी का नाम भी प्रेमशीला था। गजेन्द्र भोई भी बँधुआ गया था, वह दिल्ली में लोकनिर्माण विभाग के एक कंट्राक्टर के पास काम करता था। उसका हाथ कट गया था। इसी वजह से उसकी भूखमरी से मृत्यु हो गई। इस विषय में मैंने एक और विवरण दिया है।

गजेन्द्र के मृत्यु की खबर प्रकाशित होते ही बी डी ओ, तहसीलदार, थानेदार एवं सी डी पी ओ छोटा गमड़ा गाँव आये। 2000 नवम्बर 15 तारिख से गमड़ा गाँव में सूखा भोजन न देकर एक केन्द्र खोला गया जहाँ भोजन पका कर दिया जाने लगा। गाँव की एक औरत सुचरिता जो रिश्ते में पूर्ण की चाची लगती थी रसोई का काम करने लगी। पूर्ण की विधवा प्रेमशीला एवं उसके दो छोटे बच्चे यहाँ दिन के एक समय का भोजन करने लगे। हृदानंद के हिस्से की सूखी दाल एवं चावल प्रेमशीला लेती रही। जनवरी 2000 में पूर्ण की मृत्यु के बाद प्रेमशीला जंगल से लकड़ी काट कर घर चला रही थी। वह कंट्राक्टर के लिये लकड़ी तो काट न सकती थी पर हाँ, ईधन के लिये लकड़ियाँ काट लाती। एक दिन जंगल जाती, लकड़ियाँ काटती और उन्हें सुखाती। दुसरें दिन उन्हें छोटा गमड़ा के रास्ते पर बेचती। दो दिन में लगभग 20 रुपये की कमाई होती। नवम्बर बीस तारिख की प्रेमशीला लकड़ी के दो गट्ठर लिये जैसे ही गमड़ा गाँव में प्रवेश करती है, बेहोश होकर गिर जाती है। उस समय तक गमड़ा गाँव में भोजन केन्द्र खुले पाँच दिन हुये थे। गाँव वालों ने प्रेमशीला को खाट पर सुलाया। आँगनवाड़ी के रसोइये ने उसे खाने को दिया। पर हाथ से ठूंस - ठूंस कर खिलाने की कोशिश के बावजूद प्रेमशीला खा नहीं पा रही थी। प्रेमशीला का लकड़ियों का गट्ठरगाँव के छोर पर पड़ा रहा। किसी ने उसे नहीं छुआ। यहाँ तक कि जहाँगीर एवं जलंधर जैसे लकड़ी के व्यापारियों ने भी नहीं हुआ। वैसे उनके छूने का सवाल ही नहीं उठता था। कारण इतने बड़े जंगल के व्यापारी ईंधन की लकड़ी नहीं छूते।

प्रेमशीला का बड़ा बेटा हृदानंद छोटा गमड़ा गाँव की एक चाय की दुकान पर काम करता था। बी डी ओ नवम्बर बाईस तारीख को प्रेमशीला की बीमारी की खबर पाकर 23 तारीख को स्वास्थ्य कर्मी को साथ लेकर गमड़ा गाँव आये। स्वास्थ्य कर्मी ने प्रेमशीला का खून एक स्लाइड पर मलेरिया के परीक्षण हेतु ले लिया। उन्होंने प्रेमशीला को दिन में दो - दो गोलियों के हिसाब से तीन दिनों के लिये छः गोलियाँ भी दी। साथ ही तीस दिनों के लिये तीस आइरन एवं विटामिन की गोलियाँ भी दी। महिला स्वास्थ्य कर्मी के अनुसार प्रेमशीला के शरीर में खून की कमी थी। उस समय तक प्रेमशीला को खाने में तकलीफ होने लगी थी। आँगनबाड़ी की रसोइया तथा रिश्तें में उसकी चाची सुचरिता जबरदस्ती दिन में तीन बार दो - दो कौर खिला जाती। ऐसे में प्रेमशीला ने दवाई खाई होगी इसका मुझे भरोसा नहीं हैं। जो भी हो, नवम्बर तेईस से प्रेमशीला एवं उसके छोटे-

छोटे बेटे बेटी को दोनों वक्त खाना देने का आदेश सी डी पी ओ ने आँगनबाड़ी खाते में लिख दिया था। छोटा गमड़ा गाँव में एक अस्पताल है। सरकारी भाषा में इसे एक डॉक्टर का डॉक्टर खाना कहा जाता है। पहले डॉक्टर खाना ग्राम पंचायत के दो कोठरी वाले कार्यलय की एक कोठरी में हुआ करता था। खाने के लिये काम और विभिन्न योजनाओं में सस्ता एवं मुफ्त चावल देने की जिम्मेदारी जब से ग्राम पंचायत पर आ गई। काम बढ़ गया, तब से डॉक्टर के बैठने की जगह नहीं रही। कारण दूसरी कोठरी अब गोदाम बन चुका था। अस्पताल में कोई खास साजो - सामान नहीं होता। एक स्वास्थ्य कर्मी के घर जैसी दवायें होती हैं - ओ आर एस, पैरासिटामोल, मेविंडाजॉल, मेट्रोनिड़ाजॉल, क्लोरोक्वीन, प्राइमाक्वीन, विटामिन, टेट्रासाइक्लिन, बस इतनी ही दवायें इस डॉक्टर खाने में भी होती है। एक फॉर्मासिस्ट रहते हैं। फॉर्मासिस्ट के अनुरोध करने पर कुछ लोगों ने पंचायत की दीवार से लग कर एक खपरैल झोंपड़ी बना दी अब यहीं अस्पताल चलता है।

सन् 1994 से एक डॉक्टर का डॉक्टर खाना चल रहा हैं। इतनी अव्यवस्था के बावजूद इस अस्पताल में डॉक्टर की जगह कभी खाली नहीं होती। डॉक्टर गमड़ा रोड़ में रहते हैं। हफ्ते में दो - तीन दिन आते हैं। डॉक्टर के नहीं आने पर फॉर्मासिस्ट काम चला लेते हैं। आते भी है तो उनका काम फॉर्मासिस्ट से अधिक नहीं होता है।

दस

छबीस नवम्बर को बी डी ओ डॉक्टर एवं सी डी पी ओ गमड़ा गाँव में प्रेमशीला को देखने आते हैं। डॉक्टर अपनी मोटर साइकल में आते थे। अपने साथ सलाईन की बोतल भी लाये थे। उन्होंने प्रेमशीला के देवर से कहा कि उसे गमड़ा रोड़ अस्पताल ले जाना होगा। बी डी ओ ने अपनी गाड़ी में गमड़ा रोड़ अस्पताल ले जाने एवं डॉक्टर खाने में भर्ती करने की बात कही। पर देवर ने यह कह कर मना कर दिया कि वह बाकी खर्चे नहीं उठा पायेगा। 27 नवम्बर को डॉक्टर साहब फिर आये और एक सलाइन दिया। सलाइन देते वक्त स्वास्थ्य कर्मी उपस्थित थी तथा उस समय डॉक्टर साहब ने अन्य लोगों का इलाज किया। डॉक्टर साहब ने प्रेमशीला के देवर से कहा कि यदि वह उसे अस्पताल में भर्ती नहीं करेगा तो उसकी भूखमरी से मृत्यु निश्चित है, और ऐसे में ये खबर फैलते ही उसका देवर इन सबका जिम्मेदार ठहराया जायेगा एवं उसे गिरफ्तार भी किया जा सकता है। और फिर उसके नाम पर मुकद्दमा भी चल सकता है। डॉक्टर साहब ने उसे प्रेमशीला को लेकर गमड़ा रोड़ अस्पताल खाने आने को कहा। वे खुद अस्पताल में रहेंगे और प्रेमशीला को डॉक्टर खाने में भर्ती करा देंगे। मुकद्दमे के डर से देवर ने मुखिया और पड़ोसियों से बातचीत कर एक खटिये पर प्रेमशीला को लिटा कर नवम्बर सत्ताईस की शाम को गमड़ा रोड़ ब्लॉक स्तरीय प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में पहुँचया।वहाँ पर कई आवारा जानवर थे एवं दो - चार लड़के गप्पे हाँक रहे थे।

कोठरी में अंधेरा था। गाँव के मुखिये ने डॉक्टर साहब को खोज निकाला। पर जिसको डॉक्टर समझ रहा था वह डॉक्टर नहीं, एक फॉर्मासिस्ट था।

फॉर्मासिस्ट ने कहा कि, डॉक्टर खाने में नर्स के न होने की वजह से वहाँ का इनडॉर काम नहीं कर रहा है। गाँव वाले पहले तो नर्स का मतलब समझे नहीं। समझने के बाद उन्होंने कहा कि प्रेमशीला की देवरानी नर्स का काम कर देगी। इस बात को सुनते ही फॉर्मासिस्ट एवं गप्पे हाँक रहे लड़के जोर से हँस पड़े। इसके बाद गाँव का मुखिया किसी तरह गमड़ा रोड़ में रहने वाले छोटा गमड़ा गाँव के डॉक्टर के घर गया। डॉक्टर साहब अपने प्राइवेट प्रेक्टिस में बहुत व्यस्त थे। वहाँ बहुत लोग थे। बहुत देर तक भीड़ कम न हुई। भीड़ कम होने के बाद वे अपने नर्सिंग होम चले गये।

अपमानित मुखिया लौट आया और गाँव के लोग उसी खाट पर प्रेमशीला को वापस गमड़ा गाँव ले जाने के लिये तैयार हो गये। तब तक अंधेरा हो चुका था। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का फॉर्मासिस्ट कह रहा था कि रोगी को बलांगीर ले जाओ वरना उसका बचना मुश्किल है। अंधेरे में प्रेमशीला ने 'थू' कहा । मुखिया के अनुसार प्रेमशीला का कहना था कि 'अपना उपदेश अपने पास ही रखो।' मुझे तेरे उपदेश की जरुरत नहीं। 'थू' करने के बाद प्रेमशीला ने गाँव वालों से कहा, 'मुझे घर ले जाओ'। तुम लोग कितना परेशान होगे? बच्चे क्या कर सकते हैं? डॉक्टर भी क्या कर सकता है? मेरे माथे पर आयु लिखी होगी तो बचूँगी वरना मर जाऊँगी। वे गाँव लौट आये।
30 नवम्बर को संजय शगड़िया गमड़ा गाँव आया था। खाट पर सोयी हुई प्रेमशीला की उसने फोटो ली। उसी दिन फोटो बनवा कर उसे बस से भुवनेश्वर भिजवा दिया।

ग्यारह

1 दिसम्बर को दोपहर लगभग तीन बजे प्रेमशीला मर गई। उस समय हृदानंद छोटा गमड़ा गाँव की चाय की दुकान में था। खबर मिलने के बाद वह लगभग साढ़े तीन बजे आया। हृदानंद ने मुखाग्नि दी और करीब पाँच बजे अंतिम संस्कार हो गया।

प्रेमशीला के मरने के 1 घंटे पहले, अर्थात प्रायः पौने एक बजे से सवा बजे के भीतर संजय शगड़िया ने फैक्स द्वारा भुवनेश्वर के एक उड़िया अखबार एवं एक अंग्रेजी अखबार को प्रेमशीला के भूखमरी की खबर भेज दी थी। 2 दिसम्बर को ये खबर एक उड़िया अखबार एवं दिल्ली से निकलने वाले एक अंग्रेजी अखबार में छप गई।

भूखमरी रोकने के लिये अब जिम्मेदारी स्थानीय सरपंचों को दी गई। किसी गाँव से भूखमरी की खबर मिलते ही तुरंत उसे 10 दिनों तक मुफ्त में खाना खिलाने का बंदोबस्त करना होगा।

सरपंच की सुने तो गमड़ा गाँव में उसे घुसने नहीं दिया गया। पंचायत कार्यालय छोटा गमड़ा गाँव में है और अपने गाँव से छोटा गमड़ा गाँव जाने के लिये सरपंच को गमड़ा गाँव होकर जाना पड़ता है। सरपंच पहले जलंधर के दल में था, पर अभी जहाँगीर के दल में है। गमड़ा गाँव का वॉर्ड मेम्बर पहले एवं अभी भी जलंधर के दल में है। गमड़ा गाँव में वॉर्ड मेम्बर का प्राभव अधिक है।
दल परिवर्तन करने के बाद से सरपंच का गमड़ा गाँव में प्रवेश निषिद्ध था। इसीलिये जब भी वह पंचायत कार्यालय आता था, तो घूम - घूम कर। भूखमरी की बात तो छोड़िये, वह प्रेमशीला की मृत्यु के बारे में भी नहीं जानता था। यहाँ तक कि जिस दिन मै गमड़ा गाँव गया, उस दिन गवाही के लिये भी सरपंच नहीं आया। उसने थाने में खबर कर दी थी कि, गवाही देने आते समय जलंधर के कुछ लोगों ने उसका रास्ता रोक लिया एवं वह वापस चला गया। बाद में चोरी छिपे उसने थाने में खबर दी। मैं उस समय पंचायत समिती कार्यालय में था। पुलिस उसे गाड़ी में वहाँ लेकर आई एवं मैने उसकी गवाही ली।

2 दिसम्बर के दिन न्याय सभा में इस बात पर जोरदार चर्चा हुई। इस विषय पर आखिरी विवरण हेतु जिलापाल महोदय से फैक्स द्वारा तथ्य माँगे गये। बिजली और टेलीफोन लाइन में समस्या हेतु फैक्स रात बारह बजे पहुँचा। उसके दुसरे दिन अर्थात् 3 दिसम्बर को जिलापाल ने बी डी ओ और तहसीलदार को इस संबंध में चौबीस घंटों के भीतर तथ्य देने का आदेश दिया। भुवनेश्वर में दो तारिख को अखबार में छपी खबर गमड़ा रोड़ एवं ब्लॉक कर्यालय में तीन तारिखको पहुँची। उसी दिन बी डी ओ, तहसीलदार एवं थानेदार बाबू गमड़ा गाँव गये। यहाँ कंध लोग मृत्यु के बाद दो किस्तों में मौत का शोक मनाते है। तीन दिनों तक जिसे वे तेल घर बाटी कहते हैं। इन दिनों में वे किसी बाहर वालों से बातचीत नहीं करते। दुसरे दिन गाँव में नई हाँडी, दीप बाती, दही, मूँग, चावल, पानी आदि के द्वारा शुद्धी करते हैं। दसवें दिन आखिरी शुद्धी होती है। दसवें दिन रात को गाँव के आखिरी छोर तक सारे रिश्तेदार एवं मित्र जाते है। जहाँ प्रेमशीला की लकड़ियों के दो गठ्ठर पड़े हुये थे, वहाँ से गाँव वालों ने प्रेमशीला की आत्मा का आह्वाहन किया एवं उसे गाँव में लाये। हाँडी में सात घेरे सूत, दही, मूँग, चावल, लाई रखा गया था। पर भोज या दारु वगैरह नहीं हुआ।

पर 3 दिसम्बर को जब बी डी ओ, तहसीलदार एवं थानेदार बाबू गमड़ा गाँव गये, उस दिन अशुद्ध काल होने की वजह से किसी ने उनसे बात नहीं की। 4 दिसम्बर को अधिकारी फिर गमड़ा गाँव गये। पाँच तारीख को उन्होंने जांच की एक रिपोर्ट कलक्टर एवं सरकार को भेजी।
उनकी रिपोर्ट के संबंध में एक बात उल्लेखनीय है। 2 दिसम्बर के दिन जंलधर एवं जहाँगीर दोनों की ओर से दस - दस बोरे चावल गमड़ा गाँव में भेज दिये गये थे। दसवें दिन इसी चावल से भोज होना चाहिये था। किन्तु भूखमरी से मौत की जांच होनी थी, इसीलिये ये चावल ज्यों का त्यों पड़ा रहा।

पहले गाँव के छोर में चावल के बोरे रखे गये। उसके बाद आँगनबाड़ी केन्द्र में रखे गये और अब अंत में मृत प्रेमशीला एवं उसके देवर के घर में। मेरी जांच के समय तक वह चावल उसी तरह रखा था। चावल की बोरी खुली भी न थी। जलंधर एवं जहाँगीर ने जो चावल भेजा वो दरअसल उनके बेईमान स्टोरेज एजेन्ट द्वारा भेजा गया था। ये वही दो रुपये वाले चावल थे, जिसे डीलरों ने बेच दिया था ऐसा कागजों से पता चला।

बारह

मैं जानता हूँ, मेरी ये रिपोर्ट किसी को अच्छी नहीं लगेगी। कहा जाता कि अनाहार मृत्यु हुई है, तो विरोधी दल खुश होता है। मृत्यु हुई नहीं कहता तो शासक दल खुश होता। यह कहना झूठ न होगा कि प्रेमशीला 1 साल तक भूखो मरती रही। साल भर पहले ही उसे मुफ्त में भोजन दे दिया जाता तो अच्छा होता। ठीक है। यह दोष स्थानीय सरपंच से लेकर मेरे सर तक है। ऐसे में अगर सरपंच, तहसीलदार, बी डी ओ, जिलापाल एवं अनाहार कमिश्नर को फाँसी दे दी जाये तो क्या प्रेमशीला की मृत्यु के अभियोगी
को दण्ड मिल जायेगा?

घोर दरिद्रता की बात है ये। इस दरिद्रता के पीछे लकड़ी चुरा कर बेचने वाले, साहुकार, बँधुआ दलाल, मिलवाले, डीलर सब का हाथ है। हमारे गणतंत्र में इनके मुखियाओं के हाथ अक्षुण्ण क्षमता एवं अधिकार है। उनकी भूमिका नहीं बताता तों प्रेमशीला की दरिद्रता जानित मृत्यु सच न लगती। मुझे शासक दल का दलाल या विरोधी दल का सदस्य मत समझियेगा। मुझ पर किसी बड़े बाबू या सरकारी कर्मचारी की निष्ठुरता का अभियोग मत कीजियेगा। इसीलिये हे शासक वर्ग । मुझे जांच करने के लिये आपने भेजा। मैं जो देख रहा हूँ, वही लिख रहा हूँ। मैं सर्वज्ञ नहीं हूँ। संसार में कोई सर्वज्ञ नहीं होता। तब, जानबूझकर मैंने कोई झूठ नहीं बोला, किसी बात को
बढ़ा चढ़ाकर नहीं कहा, कोई तथ्य छिपाया नहीं। अतः इस रिपोर्ट की बारीकि से आलोचना किजिये। इसमें कोई भूल हो तो समालोचना कीजिये। किन्तु इसे कूड़ेदान में मत डाल दीजिये। मैं एक दूत मात्र हूँ। दूत की हत्या करना राजकीय रीति नहीं हैं। दूत की हत्या मत कीजिये।

अब मैं इस जाँच के एक मात्र प्रश्न का एक निश्चित उत्तर देने की कोशिश करूँगा, प्रेमशीला की मृत्युअनाहार जनित थी या नहीं। अभी जहाँगीर शासक दल में है और कहता है कि भूखमरी नहीं हुई। जलंधर विरोधी दल में हैं और कहता है कि अनाहार मृत्यु हुई है। दो - वर्ष पहले उसी गमड़ा गाँव में इसी प्रेमशीला के पति की मृत्यु हुई थी। उस समय जहाँगीर ने कहा था कि प्रेमशीला के पति पूर्ण की मौत अनाहार से हुई हैं। पूर्ण की मृत्यु अनाहार जनित नहीं है ऐसा जलंधर का कहना था। उस समय जलंधर शासक दल में था एवं जहाँगीर विरोधी दल में। जब से हमने अनाहार

मृत्यु शब्द का प्रयोग किया है तब से यह निष्पक्षता की परिधि के बाहर हो गया है। सच कहा जाये तो ये निष्पक्ष विचार पद्धति को बाधित कर रहा है। प्रेमशीला किस स्तर के अनाहार, अर्धाहार या पौष्टिक आहार से हीन थी ये मैं लिख चुका हूँ। उसकी मृत्यु के कितने दिन पहले उसे एवं उसके छोटे बच्चों को मुफ्त भोजन दिया गया, ये भी मैं लिख चुका हूँ। इस तरह मुफ्त का भोजन देकर गरीबी को रोका नहीं जा सकता; किन्तु गणतांत्रिक शासन में हम मुफ्त भोजन देने के लिये बाध्य है।

इस संपर्क में कई लोगों ने सवाल उठाये है, विशेषकर सरकारी कर्म्चारीः 'इस तरह कितने दिन हम खाने को दें? '10 दिन सरपंच देगा, महिने भर अन्य अधिकारि देंगे। उसके बाद? इन लोगों को मेरा जवाब हैः 'जब तक जरुरत है। पहले जमींदार दीन दुःखियों को भोजन देते थे। प्रेमशीला के पिता जैसे कई लोगों को पोसते थे, जो कि हमारे समाज के लिये महत्वपूर्ण है। मैं जमींदारी परंपरा का समर्थन नहीं कर रहा हूँ। इस व्यस्था के उठ जाने के बाद इसकी जिम्मेदारी सरकार पर है।'

इस रिपोर्ट से बहुत सारी अखबार की संस्थायें असंतुष्ट होंगी। अनाहारा मृत्यु हुई है ऐसा कहा जाता तो ये एक अहम खबर होती। किन्तु पूर्ण एवं प्रेमशीला की मृत्यु के साथ जो जंगल की कटाई, कर्ज के क्रूर पंजों की बात, कर्ज का जाल बिछाने वाले एवं जंगल काटने वालों की कथा जुड़ी हुई है वो इतनी आसानी से अखबार की मुख्य खबर नहीं बन सकती।

उनको मेरा विनम्र जवाब हैः 'अनाहार मृत्यु हुई या नहीं, कहने से समस्या का समाधान नहीं हो जाता। अना हार मृत्यु हुई है ऐसा मैंने नहीं कहा, इसीलिये मैं डर गया, ऐसा कह देनें से क्या समस्या का समाधान हो जायेगा? यदि मैं कहता हूँ कि भूखमरी हुई है तो एक दिन के लिये मैं अखबार में हीरो बन जाऊँगा, ये बिल्कुल सच है, पर क्या समस्या का समाधान हो जायेगा? आम जनता से गवाही लेने के लिये मैंने एक दिन तक जिला मुख्यालय में प्रतीक्षा की थी। एक भी गवाह नहीं आया। ये बात आप इन लोगों से पूछिये'। वैसे, ये प्रश्न इतना महत्वपूर्ण नहीं है। मुख्य प्रश्न ये हैं कि, भूखमरी के मूल कारण जलंधर और जहाँगीर हर बार क्यों चुन लिये जाते हैं लोग उन्हें क्यों वोट देते हैं?
ये गण्तंत्र है! ये प्रश्न आप लोगों से पूछिये।'

कोशिश

कोशिश करो कि तुम दुनिया में रहो,
दुनिया तुममें ना रहे,
क्योंकि कश्ती जब तक पानी में रहती है खूब तैरती है,
लेकिन जब पानी कश्ती में आ जाता है तो वह डुब जाती है।

मजहब

बड़े अजीब हैं इस दुनिया में लोग
वे ऊपर वाले को एक तो मानते हैं,
मगर ऊपर वाले की एक नहीं सुनते,
दो मजहब धर्म के लोग ऊपर वाले को लेकर आपस मे लड़ते रहते हैं,
दोनों कहते हैं मेरा रब सब से महान है।
काश ऐसा नहीं होता
दोनों ऊपर वाले को एक मानकर एक साथ रहते,

शरीफा शरवारी, +3 द्वितीय वर्ष

दीपक न्यारे...

जब सूर्य का जन्म हुआ, तब उसने संपूर्ण दिवस संसार को अपने प्रकाश से आलोकित किया। जैसे-जैसे उसके अस्त होने का समय समीप आने लगा, उसे ये चिंता लगी कि अब क्या होगा? उसके अस्त होने के पश्चात दुनियां में अंधकार फैल जाएगा। कौन मानव के काम आएगा? कौन उन्हें रास्ता दिखयगा?

सहसा एक आवाज आई - आप चिंतित न हो मैं हूं ना ! मैं एक छोटा - सा दीपक हूं, प्रातः काल तक अर्थात आपके उदय होने तक मैं अपने सामर्थ्य भर संसार को प्रकाश देने का प्रयत्न करूंगा।

सूर्य ने संतोष की सांस ली और अस्त हो गया। दीपक का आरंभ कब हुआ? कहाँ हुआ? ये निश्चित रूप से कहना कठिन है। अनुमान है कि प्राचीन समय में जब मानव ने अग्नि की खोज की होगी, तभी दीपक अस्तित्व में आए होंगे।

आरंभ में घास-फूस को बांधकर जलाया गया और प्रकाश प्राप्त किया गया। आग जल जाती थी तो जली हुई रखी जाती। मशाल के रूप में ये दीपक थे, जो प्रकाश देते थे।

पत्थर के युग में मानव ने प्रथमतः खोखले पत्थरों को दीपक की भांति उपयोग में लाना आरंभ किया। वृक्ष की पतली नरम छाल को रस्सी की भांति बंटकर बाती बनाई जाती।

फिर मानव ने पत्थर और पत्थर की चट्टानों को खोदकर दिये बनाना आरंभ किया। गुफाओं में मूर्तिंया एवं चित्र बनाने की प्रक्रिया में पत्थर के ये दीपक सहायक सिद्ध हुए। भारत में अंजता, एलोरा तथा अन्य स्थानों पर गुम्फओं में कला के अद्वितीय प्रदर्शन में पत्थर के दिये काम आए।

फ़्रांस में विजेरे (vijere) नदी के किनारे की गुम्फओं में पत्थर के दिये प्राप्त हुए हैं। पत्थर के दियों के पश्चात सीप ओर शंख अस्तित्व में आए। दीपक का आकार बदलता रहा। वृक्ष की छाल की बत्ती बनाकर प्रकाश देने का काम करती रही ।

धीरे-धीरे मानव ने मिट्टी के दीपक बनाना सीख लिया। धीरे-धीरे जैतून, सरसों और शीशम का तेल उपयोग में लाया जाने लगा। सत्य तो ये है कि आज भी सर्वाधिक मिट्टी के दीपक ही प्रचलित हैं।

प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में विभिन्न प्रकार के दियों का उल्लेख मिलता है। महाभारत में रात्रि के समय जब घटोत्कच से युद्ध हुआ तो दुर्योधन ने सैनिकों को हाथो में जलते हुए दीपक रखने का निर्देश दिया था।

मथुरा,पाटलिपुत्र(पटना), टेक्सिला(तक्षशिला, पाकिस्तान में) अवंतिका(उज्जैन) आदि में खुदाई के दौरान मिट्टी के दीपक प्राप्त हुए थे। टेक्सिला के दीपक कलाकारी के उत्तम नमूने थे।उनमें विशेष बात ये थी कि दीपक का निचला भाग ठंडा रखने के लिए उनमें पानी भरने का स्थान होता था।

भारत में युगान देश के दीपकों से प्रभावित होकर नाव के आकार के दीपक भी बनाए गए। प्याले के आकार के दीपक तो 5 वीं शताब्दी से पूर्व तक बनने लगे थे।

इनके अतिरिक्त मंदिर में आरती के समय उपयोग में आने वाले पंचमुखी और सप्तमुखी दीपक भी प्रचलन में थे। पूजा के समय दीपक 'अर्चना दिप' कहलाते थे।

भारत के विभिन्न राज्यों के दीपक अपनी अलग पहचान रखते हैं, जैसे ब्याघ्र दिप(ओडिशा), राजलक्ष्मी दिप(बंगाल), मयूर दिप(राजस्थान), कनक दिप(बिहार), नागदीप(महाराष्ट्र) बहुत प्रसिद्ध हैं।

भारत में पुणे (महाराष्ट्र) का केलकर संग्रहालय और ग्वालियर (मध्यप्रदेश) का प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम अपने दीपक संग्रह के लिए प्रसिद्ध है। महात्मा बूद्ध की माता श्री मायादेवी के शयनकक्ष में रखा रहने वाला लकड़ी के खंभे पर गंधार शैली में बना हुआ दीपक भारत का सबसे बड़ा दीपक है।

1804 में इटली के सीसली टापू के एक गांव में एक किसान के खेत में एक मकबरा मिला। मकबरे की छत और द्वार सीसा एवं अन्य धातुओं के मिश्रण से बंद किया हुआ था। जब छत

छत तोड़ी गई तो सब ये देखकर स्तंभित रह गए कि मकबरा रोशन था। लाश के सिरहाने एक मर्तबान में रखा हुआ दीपक जल रहा था। कई लोग तो इसे भूतों की कारस्तानी समझकर भाग खड़े हुए।किसी ने साहस करके मर्तबान तोड़ डाला। मर्तबान के टूटने ही दीपक बुझ गया। मकबरों से मिले कागजों के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि वह दीपक सैकड़ों वर्षों से जल रहा था।

इतिहासकार विलियम कामडेल ने मेसोपोटोमियां के एक मकबरे में पाए जाने वाले प्रज्वलित दीपक सम्बंधी जानकारी देते हुए लिखा -- 'उस दीपक में तेल के स्थान पर पिघला हुआ सोना भरा था।'

इससे ये निष्कर्ष निकला कि प्राचीनकाल के रसायन शास्त्री सोने को एक ऐसे मिश्रण में परिवर्तन करने की कला से परिचित थे, जो वर्षों तक दीपक को प्रज्वलित रख सकता था।

इतिहासकार लायंस बैन ने अपनी पुस्तक मेक्सिको की संस्कृति में देवी के एक मंदिर में पाए जाने वाले दीपक के बारे में लिखा है -- वह दीपक मिट्टी का बना हुआ था, जो आपस में जुड़े हुए दो बर्तनों में बंद था। एक बर्तन पर सोने की तो दूसरे पर चांदी की परत चढ़ी हुई थी।

तेल के स्थान पर एक अपरिचित मिश्रण भरा हुआ था। उन बर्तनों पर लिखी हुई जानकारी से ज्ञात हुआ कि किसी राजा ने देवी अगस्टा की वो दीपक श्रधास्वरूप पेश किया था और जो वर्षों से रोसन था।

सेंट ऑगस्टाइन ने सौंदर्य की देवी वीनस के मंदिर में जलने वाले दीपक का उल्लेख किया है, जो न जाने कितने हजार वर्षों से जल रहा था।

शाकंबरी, +3 प्रथम वर्ष

आपकी बात

हमारे विभाग की ई-पत्रिका को पढ़ने के बाद में संपादक मण्डल को बधाई देना चाहती हूं कि उन्होंने इन पत्रिका में जो विचार और रचनाओं के माध्यम से जो संदेश देते है वह अन्य छात्राओं का भी आत्मविश्वास बढ़ाया है। में आशा करती हूँ कि आने वाले समय में संपादक मंडल इसी प्रकार हमारा ज्ञान बंधन करेगा और विश्वास बनाये रखेगा ।

बर्षा, +3 प्रथम वर्ष

मैं मोनालिसा मोहन्ती (+3 प्रथम वर्ष) की छात्रा हूँ। इस साल में हिंदी भारती की ई पत्रिका में पहली बार शामिल हुई हूँ, और मुझे बड़ी खुशी महसूस हो रही है। डॉ वेदुला रामालक्ष्मी मैडम से प्रेरणा पाकर और हमारी हिंदी विभाग के द्वितीय, तृतीय वर्ष की दीदी लोगों से सहायता लेकर मैं आगे बढ़ती हुं। हिंदी भारती में जो भी लेख में पढ़ती हूँ मुझे बहुत खुशी होती है और आगे कुछ बड़ा करने की प्रेरणा मिलती है।

मोनालिसा मोहन्ती, +3 प्रथम वर्ष

जो छात्र नया लिखना शुरु कर रहे है इनके लिए हिंदी भारती एक आशा और आकांक्षा का केंद्र है। इस पत्रिका के माध्यम से हम अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अवसर पाते हैं।

इस पत्रिका के संपादक मंडली में मुझे सदस्य रूप में स्थान पाने हेतु आभार प्रकट करती हूँ, और गौरवांवित महसूस करती हूँ।

श्राबणी महंती, +3 प्रथम वर्ष

कजाकी

प्रेमचंद

https://youtu.be/HzD_g8Y7qnM

यादों के गलियारों से

विभाग में आयोजित संगोष्ठी में मुख्य वक्ता डॉ. गुलाम मोइनुद्दीन ख़ान

धन्यवाद